वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं. 411
ISBN-978-93-82071-99-0

समवसरण मानस्तंभ स्तोत्र आदि

सप्त स्तोत्र

(मानस्तंभ, चैत्यप्रासादभूमि, चैत्यवृक्ष, सिद्धार्थवृक्ष, स्तूप, धर्मचक्र, गंधकुटी स्तोत्र)

–रचयित्री –

जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी,
दो बार डी.लिट्. की मानद उपाधि से अलंकृत
परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि
श्री ज्ञानमती माताजी

बीसवीं सदी के प्रथमाचार्य युगप्रवर्तक चारित्रचक्रवर्ती 108 श्री शांतिसागर जी महाराज की दक्षिण से उत्तर की ओर सन् 1928 में सम्मेदशिखर की यात्रा को चिरस्थाई बनाने हेतु सम्मेदशिखर में ''आचार्य श्री शांतिसागर धाम'' की स्थापना के लिए भोजग्राम (कर्नाटक) से गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की पावन प्रेरणा से माघ शु. तृतीया (2 फरवरी 2014) को ''आचार्य श्री शांतिसागर सम्मेदशिखर ज्योति रथ'' प्रवर्तन के शुभ अवसर पर प्रकाशित

-प्रकाशक-

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान

जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.फोन नं.- (01233) 280184, 280994
Website : www.jambudweep.org www.encyclopediaofjainism.com
E-mail : jambudweeptirth@gmail.com
Facebook : jaintirthjambudweep

प्रथम संस्करण	वीर नि. सं. 2540	मूल्य
1100 प्रतियाँ	माघ शु. तृतीया, 2 फरवरी 2014	32/-रु.

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रंथों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएं भी प्रकाशित होती रहती हैं।

–: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत :–

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी

(दो बार डी.लिट्. की मानद उपाधि से अलंकृत)

–: मार्गदर्शन :–

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी

(पीएच.डी. की मानद उपाधि से अलंकृत)

–: निर्देशक एवं सम्पादक:–

कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामीजी

–: प्रबंध सम्पादक :–

जीवन प्रकाश जैन

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

कम्पोजिंग - ज्ञानमती नेटवर्क
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

सम्पादकीय

–स्वस्तिश्री पीठाधीश रवीन्द्रकीर्ति स्वामी जी

परम पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने बीसवीं–इक्कीसवीं शताब्दी में साहित्य सृजन की अविरल धारा को प्रवाहित करके जैनधर्म की अद्भुत प्रभावना की है तथा जैन साहित्य जगत पर भी अनंत उपकार किए हैं।

जिनेन्द्र भगवान की स्तुति, भक्ति कर्मनिर्जरा में विशेष कारण है। भक्त भगवान की भक्ति करते–करते एक दिन स्वयं भगवान बन जाता है। पूज्य माताजी हमेशा अपने प्रवचनों में कहती हैं कि प्रत्येक प्राणी की आत्मा भगवान आत्मा है, जैसे दूध में घी शक्तिरूप में विद्यमान है, वैसे ही प्रत्येक आत्मा में परमात्मा बनने की शक्ति विद्यमान है।

बीसवीं सदी के प्रथमाचार्य चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शान्तिसागर जी महाराज के प्रथम पट्टशिष्य चारित्र चूड़ामणि आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के करकमलों से आर्यिका दीक्षा को प्राप्त करने वाली, वर्तमान में सभी पीछी धारी साधुओं में सबसे प्राचीन गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी हैं। इनकी लेखनी से लिखा गया एक–एक शब्द मोती की माला के समान है।

समवसरण के मानस्तम्भ स्तोत्र आदि 'सप्त स्तोत्र' में पूज्य माताजी ने समवसरण की सम्पूर्ण रचना को समाहित किया है। समवसरण के बारे में इन स्तुतियों को पढ़कर पूर्ण जानकारी प्राप्त हो जाती है और साथ ही समवसरण के भगवंतों की भक्ति भी हो जाती है।

यह 'सप्त स्तोत्र' सभी के जीवन में एक दिन साक्षात् समवसरण का दर्शन करावे, यही मंगल भावना है। पूज्य माताजी दीर्घायु हों, स्वस्थ रहें, वीरज्ञानोदय ग्रंथमाला दिन दूनी रात चौगुनी वृद्धि करे, यही जिनेन्द्रदेव से मंगल प्रार्थना है।

प्रस्तावना

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

तीर्थंकर भगवान को जब केवलज्ञान होता है उस समय सौधर्म इन्द्र की आज्ञा से धनकुबेर अधर आकाश में समवसरण की रचना करता है। पृथ्वी से 5000 धनुष अर्थात् 20,000 हाथ की ऊँचाई पर समवसरण बनता है। समवसरण का वैभव अचिन्त्य है।

परम पूज्य चारित्र चन्द्रिका गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने समवसरण के मानस्तंभ, चैत्यप्रासाद भूमि, चैत्यवृक्ष, सिद्धार्थवृक्ष, स्तूप, धर्मचक्र, गंधकुटी स्तोत्र ऐसे सप्त स्तोत्र की रचना कर भक्तों को समवसरण की भक्ति पाठ करने का स्वर्ण अवसर प्रदान किया है।

हम सबने अभी साक्षात् समवसरण का दर्शन नहीं किया, लेकिन इसे पढ़कर अगले भव में समवसरण का दर्शन करके समवसरण की रचनाओं को शीघ्रता से जान जाएंगे।

इस स्तोत्र में सर्वप्रथम पूज्य माताजी ने समवसरण की रचना के बारे में पूर्णरूप से वर्णन किया है कि समवसरण में कहाँ क्या–क्या है ? समवसरण में आठ भूमि और तीन कटनी हैं। तृतीय कटनी पर भगवान गंधकुटी में अधर विराजमान हैं। इसके बाद समवसरण वंदना दी है जिसको पढ़कर तीर्थंकर के समवसरण की महिमा का ज्ञान होता है।

प्रथम **'समवसरण मानस्तंभ स्तोत्र'** में समवसरण में प्रथमभूमि में चारों गली में दिव्य रत्नमय मानस्तंभ का वर्णन है। ये मानस्तंभ भगवान की ऊँचाई से 12 गुने ऊँचे हैं। बीस योजन तक प्रकाश फैलाते हैं। इन मानस्तंभों का दर्शन कर मानी का मान गलित हो जाता है और वह भव्यात्मा सम्यग्दृष्टि बनकर अनंत संसार को सीमित कर लेता है। इस स्तोत्र में 24 तीर्थंकरों के 24 × 4 = 96 मानस्तंभों का वर्णन हैं। एक–एक मानस्तंभ में 4–4 जिनप्रतिमाएं हैं अतः 96 × 4 = 384 जिनप्रतिमाओं की वंदना हो जाती हैं।

द्वितीय **'समवसरण चैत्यप्रासाद भूमि स्तोत्र'** में प्रथम भूमि में स्थित जिनमंदिरों की स्तुति है। इसमें एक–एक जिनमंदिर के अंतराल में पाँच–पाँच प्रासाद हैं। 24 तीर्थंकरों के समवसरण में प्रथमभूमि में जितने जिनमंदिर और जिनप्रतिमाएँ हैं, उन सबकी वंदना हो जाती हैं।

तृतीय **'समवसरण चैत्यवृक्ष स्तोत्र'** में समवसरण में चौथी उपवन भूमि में स्थित चैत्यवृक्षों के जिनबिम्बों की स्तुति है। इसमें पूर्व आदि दिशा में क्रम से अशोक,

सप्तच्छद, चंपक और आम्र के वन हैं। प्रत्येक वन में एक-2 चैत्यवृक्ष हैं जिनमें 4-4 जिनप्रतिमाएँ विराजमान हैं। प्रत्येक प्रतिमाओं के सामने एक-एक मानस्तंभ है। 24 तीर्थंकरों के चैत्यवृक्ष 24×4= 96 हैं एवं 96 × 4 = 384 जिनप्रतिमाएँ हैं। 96 चैत्यवृक्ष सम्बन्धी 96 × 4 = 384 मानस्तंभ हैं और प्रत्येक मानस्तंभ में 4-4 जिनप्रतिमाएँ हैं, अतः 384×4=1536 जिनप्रतिमाएँ मानस्तम्भ की हैं। चैत्यवृक्ष और मानस्तंभ की मिलाकर 384+1536=1920 जिनबिम्बों की वंदना इस स्तोत्र में हो जाती है।

चतुर्थ **'समवसरण सिद्धार्थ वृक्ष स्तोत्र'** में समवसरण में छठी भूमि-कल्पभूमि में स्थित सिद्धार्थ वृक्षों की सिद्धप्रतिमाओं की स्तुति है। चारों दिशा में क्रम से नमेरु, मंदार, संतानक और पारिजात ऐसे एक-एक सिद्धार्थ वृक्ष हैं इनमें चार-चार सिद्धप्रतिमाएँ विराजमान हैं। 24 तीर्थंकरों के 24 × 4=96 सिद्धार्थ वृक्ष हैं। इन सिद्धार्थ वृक्षों पर 96 × 4 = 384 जिनप्रतिमाएँ विराजमान हैं, प्रत्येक प्रतिमाओं के सामने एक-एक मानस्तंभ है। प्रत्येक मानस्तंभ में 4-4 जिनप्रतिमाएँ हैं अतः 384×4=1536 जिनप्रतिमाएँ मानस्तंभ की हैं। अतः सिद्धार्थवृक्ष की और मानस्तंभ की मिलाकर 384+1536=1920 जिनबिम्बों की इसमें वंदना हो जाती है।

पंचम **'समवसरण स्तूप स्तोत्र'** में समवसरण में सातवीं भूमि में स्थित नव-नव स्तूपों में विराजमान जिन और सिद्धप्रतिमाओं का स्तवन है। एक तीर्थंकर के समवसरण में 9 × 4 = 36 स्तूप और 24 तीर्थंकरों के 24×36=864 स्तूप होते हैं। इन स्तूपों में विराजमान समस्त सिद्धों को मन, वचन, कायपूर्वक मेरा नमस्कार हो।

षष्ठम **'समवसरण धर्मचक्र स्तोत्र'** में आठ भूमि के बाद भगवान की गंधकुटी के नीचे प्रथम कटनी पर यक्षेंद्रों के मस्तक पर स्थित धर्मचक्र का स्तवन है। ये धर्मचक्र हजार आरों से सहित हैं और चारों दिशाओं में इनका प्रकाश फैलता है। ये मिथ्यात्वरूपी अंधकार को दूर करने वाले हैं। एक तीर्थंकर के समवसरण में 4 धर्मचक्र होते हैं अतः 24 तीर्थंकर के 24 × 4 = 96 धर्मचक्र का स्तवन है।

सप्तम **'समवसरण गंधकुटी स्तोत्र'** में तृतीय कटनी पर गंधकुटी में जहाँ तीर्थंकर भगवान विराजमान रहते हैं। उसका स्तवन है। गंधकुटी में भगवान 4 अंगुल अधर विराजमान रहते हैं। एक मुख होकर भी चार मुख दिखने से यह चतुर्मुखी ब्रह्मा कहलाते हैं। भगवान के पास 8 प्रतिहार्य होते हैं। शासन देव-देवी विद्यमान रहते हैं। भगवान से सहित गंधकुटी की महिमा अपरम्पार है।

यह 'सप्त स्तोत्र' आप सभी के जीवन में एक दिन साक्षात् समवसरण का दर्शन करावें, यही मंगल भावना है।

दो शब्द

-आर्यिका सुव्रतमती

सरस्वती लक्ष्मी जहाँ, नित प्रति करें प्रणाम।
पुण्यमयी इस धाम का, समवसरण है नाम।।

भगवान महावीर के शासनकाल में बीसवीं-इक्कीसवीं शताब्दी में जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी युगप्रवर्तिका, डी. लिट्. की मानद उपाधि से अलकृंत चारित्रचन्द्रिका, आर्यिका शिरोमणि परम पूज्य गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने जिनधर्म, जिनागम की विशेष प्रभावना करते हुए अब तक 300 से अधिक ग्रंथों का लेखन शुद्ध, प्रासुक लेखनी से किया हैं, जिनमें से अभी कुछ ग्रंथ अप्रकाशित हैं।

आज के भौतिक युग में लोगों को धर्ममार्ग में लगाने के लिए भगवान की स्तुति, भक्ति सशक्त माध्यम है। पूज्य माताजी ने देव, शास्त्र, गुरु की भक्ति में सैकड़ों स्तुतियाँ लिखी हैं। इस समवसरण मानस्तंभ स्तोत्र आदि 'सप्त स्तोत्र' में पूज्य माताजी ने तीर्थंकर भगवान के समवसरण की रचना का सुन्दर वर्णन किया है। पूज्य माताजी ने अनेकों समवसरण विधान की रचना करके, भगवान ऋषभदेव समवसरण पुस्तक की रचना करके, 'समवसरण रचना' पुस्तक में तिलोयपण्णत्ति, षट्खण्डागम धवला पुस्तक 9, आदिपुराण भाग-1, हरिवंशपुराण से समवसरण का वर्णन करके अनेकों बार, सैकड़ों बार परोक्षरूप में भगवान के समवसरण का दर्शन, वंदन और समवसरण रचना का सूक्ष्मता से अवलोकन किया है।

अयोध्या में पूज्य माताजी की पावन प्रेरणा से शास्त्रोक्त समतल समवसरण रचना का सुन्दर निर्माण हुआ है। हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप स्थल पर भगवान शान्तिनाथ का सुन्दर समवसरण बनने जा रहा है। प्रयाग में समवसरण श्री विहार रथ के समवसरण की स्थापना हुई है।

इस 'सप्तस्तोत्र' की प्रूफरीडिंग के माध्यम से 'समवसरण रचना' के स्वाध्याय का लाभ मुझे प्राप्त हुआ है। यह स्तोत्र मेरे जीवन में शीघ्र ही साक्षात् समवसरण का दर्शन करावें और भवभ्रमण को दूर कर केवलज्ञान प्राप्त कराने में सहायक हो, यही मंगल भावना है। इन्हीं शब्दों के शब्द पूज्य माताजी के पावन चरणों में कोटि कोटि नमन।

हार्दिक उद्गार

-ब्र. कु. बीना जैन (संघस्थ)

नमस्तस्यै सरस्वत्यै विमलज्ञानमूर्तये।
विचित्रालोकयात्रेयं यत्प्रसादात् प्रवर्तते।।

सरस्वती माता को नमन करते हुए, वर्तमान में भगवान महावीर के शासनकाल में साक्षात् सरस्वती स्वरूपा, 300 ग्रंथों की लेखिका, क्वँारी कन्याओं की पथप्रदर्शिका, वर्तमान में पीछीधारी सभी साधुओं में सबसे प्राचीन दीक्षित, चारित्र चक्रवर्ती प्रथमाचार्य श्री शांतिसागर महाराज के 3 बार दर्शन करने वाली, उनसे अनुभव ज्ञान प्राप्त करने वाली, चारित्र चूड़ामणि प्रथम पट्टाचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के करकमलों से दीक्षित परम पूज्य चारित्र-चन्द्रिका, युगप्रवर्तिका, आर्यिका शिरोमणि गणिनीप्रमुख 105 श्री ज्ञानमती माताजी को नमन करती हूँ।

पूज्य माताजी के चरण सानिध्य में रहकर, निरन्तर ज्ञानाराधना करते हुए नित्य नई-नई बातों का ज्ञान होता है। जिनागम नवनीत के माध्यम से आदिपुराण, पद्मपुराण, उत्तरपुराण, षट्खण्डागम आदि ग्रंथों के स्वाध्याय का सुअवसर प्राप्त हो रहा है।

पूज्य माताजी के मन मस्तिष्क में समवसरण का पूरा चित्रण बना हुआ है, जिसे वे कापी-डायरियों में कहाँ क्या रचना है ? समवसरण में कौन सी रचना का क्या माप है ? आदि सब लिख देती हैं। पूज्य प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी ने 'समवसरण विंशतिका' में समवसरण का स्वरूप बताते हुए लिखा है-

जहाँ पहुँचते ही दर्शक का पाप शमन होता।
जहाँ पहुँचते ही मानी का मान गलन होता।।
सबको शरण प्रदाता वह ही समवसरण माना।
जिनवर की उस धर्म सभा को नमूँ परम धामा।।

समवसरण के ये 'सप्त स्तोत्र' मेरे जीवन में भी समवसरण का दर्शन करावें, यही मंगल भावना है। पूज्य माताजी स्वस्थ रहें, दीर्घायु प्राप्त करें, जिनेन्द्रदेव से यही मंगल प्रार्थना है।

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि

श्री ज्ञानमती माताजी का संक्षिप्त-परिचय

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

जन्मस्थान-टिकैतनगर (बाराबंकी) उ.प्र.

जन्मतिथि-आसोज सुदी 15 (शरदपूर्णिमा) वि. सं. 1991, (22 अक्टूबर सन् 1934)

जाति-अग्रवाल दि. जैन, **गोत्र-**गोयल, **नाम-**कु. मैना

माता-पिता-श्रीमती मोहिनी देवी एवं श्री छोटेलाल जैन

आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत-ई. सन् 1952, बाराबंकी में शरदपूर्णिमा के दिन

क्षुल्लिका दीक्षा-चैत्र कृ. 1, ई. सन् 1953 को महावीरजी अतिशय क्षेत्र (राज.) में आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज से। नाम-क्षुल्लिका वीरमती

आर्यिका दीक्षा-वैशाख कृ. 2, ई. सन् 1956 को माधोराजपुरा (राज.) में चारित्रचक्रवर्ती 108 आचार्य श्री शांतिसागर जी की परम्परा के प्रथम पट्टाधीश आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के करकमलों से।

साहित्यिक कृतित्व-अष्टसहस्री, समयसार, नियमसार, मूलाचार, कातंत्र-व्याकरण, षट्खण्डागम आदि ग्रंथों के अनुवाद/टीकाएं एवं लगभग 300 ग्रंथों की लेखिका।

डी.लिट्. की मानद उपाधि-सन् 1995 में अवध वि.वि. (फैजाबाद) द्वारा एवं तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय मुरादाबाद द्वारा 8 अप्रैल 2012 को ''डी.लिट्.'' की मानद उपाधि से विभूषित।

तीर्थ निर्माण प्रेरणा-हस्तिनापुर में जंबूद्वीप, तेरहद्वीप, तीनलोक आदि रचनाओं के निर्माण, शाश्वत तीर्थ अयोध्या का विकास एवं जीर्णोद्धार, प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ का निर्माण, तीर्थंकर जन्मभूमियों का विकास यथा-भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) में 'नंद्यावर्त महल' नामक तीर्थ निर्माण, भगवान पुष्पदंतनाथ की जन्मभूमि काकन्दी तीर्थ (निकट गोरखपुर-उ.प्र.) का विकास, भगवान पार्श्वनाथ केवलज्ञानभूमि अहिच्छत्र तीर्थ पर तीस चौबीसी मंदिर, हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप स्थल पर भगवान शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ की 31-31 फुट उत्तुंग खड्गासन प्रतिमा, मांगीतुंगी में निर्माणाधीन 108 फुट उत्तुंग भगवान ऋषभदेव की विशाल प्रतिमा, महावीर

जी तीर्थ पर महावीर धाम में पंचबालयति मंदिर, शिर्डी में ज्ञानतीर्थ, सम्मेदशिखर में आचार्य श्री शांतिसागर धाम इत्यादि।

महोत्सव प्रेरणा—पंचवर्षीय जम्बूद्वीप महामहोत्सव, भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव, अयोध्या में भगवान ऋषभदेव महाकुंभ मस्तकाभिषेक, कुण्डलपुर महोत्सव, भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव, दिल्ली में कल्पद्रुम महामण्डल विधान का ऐतिहासिक आयोजन इत्यादि। विशेषरूप से 21 दिसम्बर 2008 को जम्बूद्वीप स्थल पर विश्वशांति अहिंसा सम्मेलन का आयोजन हुआ, जिसका उद्घाटन भारत की तत्कालीन राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवीसिंह पाटील द्वारा किया गया।

शैक्षणिक प्रेरणा—'जैन गणित और त्रिलोक विज्ञान' पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन, इतिहासकार सम्मेलन, न्यायाधीश सम्मेलन एवं अन्य अनेक राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर के सेमिनार, ऑनलाइन जैन इनसाइक्लोपीडिया आदि।

रथ प्रवर्तन प्रेरणा—जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति (1982 से 1985), समवसरण श्रीविहार (1998 से 2002), महावीर ज्योति (2003-2004) का भारत भ्रमण।

इस प्रकार नित्य नूतन भावनाओं की जननी पूज्य माताजी चिरकाल तक इस वसुधा को सुशोभित करती रहें, यही मंगल कामना है।

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान-संक्षिप्त परिचय

—कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामीजी

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान की स्थापना पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से सन् 1972 में राजधानी दिल्ली में हुई थी। संस्थान का मुख्य कार्यालय सन् 1974 से हस्तिनापुर में प्रारंभ हुआ। इस संस्थान के अन्तर्गत अनेक गतिविधियाँ हस्तिनापुर में तथा अन्यत्र चल रही हैं-

1. सन् 1972 से वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला के अन्तर्गत प्रतिवर्ष लाखों ग्रंथ प्रकाशित हो रहे हैं।

2. सन् 1974 से इस संस्थान के मुखपत्र के रूप में 'सम्यग्ज्ञान' हिन्दी मासिक पत्रिका का निरंतर प्रकाशन हो रहा है।

3. सन् 1974 से 1985 तक हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप रचना का निर्माण कार्य हुआ।

4. सन् 1974 से अब तक जम्बूद्वीप रचना के अतिरिक्त अनेक जिनमंदिरों का निर्माण हुआ है-कमल मंदिर, तीन मूर्ति मंदिर, ध्यान मंदिर, शांतिनाथ मंदिर, वासुपूज्य मंदिर, ॐ मंदिर, सहस्रकूट मंदिर, विद्यमान बीस तीर्थंकर मंदिर, आदिनाथ मंदिर, अष्टापद मंदिर, ऋषभदेव कीर्तिस्तंभ, स्वर्णिम तेरहद्वीप रचना, तीन लोक रचना, नवग्रहशांति जिनमंदिर, चौबीस तीर्थंकर मंदिर एवं श्री शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ की 31-31 फुट उत्तुंग प्रतिमाओं की स्थापना ।

5. जम्बूद्वीप पुस्तकालय जिसमें लगभग 15000 ग्रंथ संग्रहीत हैं।

6. णमोकार महामंत्र बैंक जिसमें भक्तों द्वारा लिखकर भेजे गये करोड़ों णमोकार मंत्र जमा किये जाते हैं।

7. समय-समय पर शिक्षण-प्रशिक्षण शिविरों तथा संगोष्ठियों के आयोजन किये जाते हैं।

8. यात्रियों के शुद्ध भोजन के लिए राजा श्रेयांस भोजनालय का संचालन।

9. यात्रियों के ठहरने के लिए आधुनिक सुविधायुक्त डीलक्स फ्लैट्स वाली कई धर्मशालाओं तथा कोठियों एवं बंगलों का निर्माण किया गया है।

10. जम्बूद्वीप परिक्रमा के लिए नौका विहार, ऐरावत हाथी तथा मनोरंजन हेतु मिनी ट्रेन, झूले आदि हैं।

11. तीर्थंकर जन्मभूमियों की वंदना एवं धार्मिक फिल्मों का प्रदर्शन करने

वाले थियेटर से समन्वित गणिनी ज्ञानमती हीरक जयंती एक्सप्रेस।

12. गणिनी ज्ञानमती दिगम्बर जैन पत्राचार परीक्षा केन्द्र का संचालन।

13. इंटरनेट पर जैनधर्म के इन्साइक्लोपीडिया (www.encyclopediaof jainism. com) का निर्माण।

दिल्ली, मेरठ, मुजफ्फरनगर, हरिद्वार, झाँसी, तिजारा आदि से जम्बूद्वीप स्थल तक आने के लिए दिन भर बसें मिलती रहती हैं।

दि. जैन त्रिलोक शोध संस्थान के अन्तर्गत भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार में भव्य नंद्यावर्त महल तीर्थ, प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में निर्मित तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ तथा महावीर जी अतिशय क्षेत्र के महावीर धाम परिसर में निर्मित पंचबालयति दिगम्बर जैन मंदिर का संचालन होता है। वर्तमान में इस संस्थान के अन्तर्गत सम्मेदशिखर जी तीर्थ पर ''आचार्य श्री शांतिसागर धाम'' का निर्माण प्रारंभ किया जा रहा है।

जम्बूद्वीप एवं अन्य रचनाओं के दर्शन हेतु हस्तिनापुर पधारकर आध्यात्मिक एवं भौतिक सुख की प्राप्ति करें।

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला के सहयोगी

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान के अन्तर्गत ''वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला'' की स्थापना सन् 1972 में हुई। तब से अब तक लाखों की संख्या में ग्रन्थों का प्रकाशन हो चुका है और निरन्तर हो रहा है। ग्रंथमाला से पाठकों को ग्रन्थ कम कीमत में प्राप्त हो सकें, इस दृष्टि से ग्रन्थमाला में एक संरक्षक योजना अगस्त सन् 1990 से प्रारंभ की गई है। इस योजना के अन्तर्गत निम्न महानुभाव अब तक संरक्षक बनकर अपना सहयोग प्रदान कर चुके हैं।

शिरोमणि संरक्षक

1. श्रीमती निर्मला जैन ध.प. स्व. श्री प्रेमचन्द्र जैन, तत्पुत्र प्रदीप कुमार जैन, खारीबावली, दिल्ली-6।
2. श्रीमती सुमन जैन ध.प. श्री दिग्विजय सिंह जैन, इंदौर।
3. श्री महावीर प्रसाद जैन संघपति, जी-19, साऊथ एक्सटेन्शन, नई दिल्ली।
4. श्री महेन्द्र पाल हरेन्द्र कुमार जैन, सूरजमल विहार, दिल्ली।
5. श्रीमती मोहनी जैन ध.प. श्री सुनील जैन, प्रीत विहार, दिल्ली।
6. श्री देवेन्द्र कुमार जैन (धारूहेड़ा वाले) गुड़गाँव (हरि.)।
7. श्रीमती शारदा रानी जैन ध.प. स्व. रिखबचंद जैन, बाहुबली एन्क्लेव, दिल्ली-92।
8. डॉ. देवेन्द्र कुमार जैन, भोपाल (म.प्र.)
9. श्रीमती संगीता जैन ध.प. श्री संजीव कुमार जैन, शेरकोट (बिजनौर) उ.प्र.
10. श्री अनिल कुमार जैन, दरियागंज, दिल्ली
11. श्री बी.डी. मदनाइक, मुम्बई
12. श्री धनकुमार जैन, बाहुबली एन्क्लेव, दिल्ली-92।
13. श्री जितेन्द्र कुमार जैन एवं श्रीमती सुनीता जैन कोटड़िया, फ्लोरिडा, यू.एस.ए.
14. श्रीमती विमला देवी जैन ध.प. श्री ओमप्रकाश जैन, स्वालिक नगर, हरिद्वार (उत्तराखंड)।
15. श्री अमित जैन एवं संभव जैन सुपुत्र श्रीमती अनीता जैन ध.प. श्री मूलचंद जैन पाटनी, दिसपुर (कामरूप) आसाम।
16. श्रीमती अजित कुमारी जैन ध.प. श्री महेन्द्र कुमार जैन, ओबेदुल्लागंज (रायसेन) म.प्र.।
17. श्री नाभिकुमार जैन, जैन बुक डिपो, सी-4, पी.वी.आर. प्लाजा के पीछे, कनॅट प्लेस, नई दिल्ली।

परम संरक्षक

1. श्री माँगीलाल बाबूलाल पहाड़े, हैदराबाद (आन्ध्र प्रदेश)।
2. डॉ. प्रकाशचन्द्र जैन, 792 विवेकानंदपुरी, सिविल लाइन, सीतापुर (उ.प्र.)।
3. श्री सुमत प्रकाश जैन, गज्जू कटरा, शाहदरा, दिल्ली।
4. श्री सुनील कुमार जैन, द्वारा-सुनील टैक्सटाईल्स, सरधना (मेरठ) उ.प्र.।
5. स्व. श्री प्रकाश चंद अमोलक चंद जैन सर्राफ, सनावद (म.प्र.)।
6. श्री प्रद्युम्न कुमार जवेरी, रोकड़ियालेन, बोरीवली (वेस्ट) मुंबई।
7. श्रीमती उर्मिला देवी ध.प. श्री कान्ती प्रसाद जैन, ऋषभ विहार, दिल्ली।
8. श्रीमती उषा जैन ध.प. श्री विमल प्रसाद जैन, ऋषभ विहार, दिल्ली।
9. श्री आनन्द प्रकाश जैन (सौरम वाले) , गांधीनगर, दिल्ली।
10. श्रीमती सरिता जैन ध.प. श्री राजकुमार जैन, किदवई नगर, कानपुर।
11. स्व. श्रीमती कैलाशवती ध.प. श्री कैलाश चन्द्र जैन , तोपखाना बाजार, मेरठ।
12. श्री भानेन्द्र कुमार जैन, द्वारा-श्री विद्या जैन, भगत सिंह मार्ग, जयपुर।
13. श्री प्रदीप कुमार शान्तिलाल बिलाला, अनूपनगर, इंदौर, (म.प्र.)।
14. श्री सुरेशचंद पवन कुमार जैन, बाराबंकी (उ.प्र.)।

15. श्री नथमल पारसमल जैन, कलकत्ता-7।
16. श्रीमती स्व. शांताबाई ध.प. श्री कमलचंद जैन, सनावद (म.प्र.)।
17. श्री रूपचंद जैन कटारिया, दिल्ली
18. श्री आशु जैन, कालका जी, नई दिल्ली
19. श्री प्रद्युम्न कुमार जैन छोटी सा., श्री अमरचंद जैन सर्राफ, लखनऊ (उ.प्र.)
20. श्रीमती शशि जैन ध.प. श्री दिनेशचंद जैन, शिवालिक नगर, हरिद्वार (उत्तराखंड)।

संरक्षक

1. स्व. श्री अनन्तवीर्य जैन एवं स्व. श्रीमती आदर्श जैन के सुपुत्र श्री मनोज कुमार जैन, मेरठ।
2. श्रीमती राजूबाई मातेश्वरी श्री शिखर चन्द भाई देवेन्द्र कुमार लखमी चन्द जैन, सनावद (म.प्र.)।
3. श्री चिमनलाल चुन्नीलाल दोशी, कीका स्ट्रीट, मुम्बई।
4. श्रीमती अरुणाबेन मन्नूभाई कोटड़िया, सी.पी. टैंक रोड, मुम्बई।
5. श्रीमती ताराबेन चन्दूलाल दोशी, फ्रेन्च ब्रिज, मुम्बई।
6. श्री रतिलाल चुन्नीलाल दोशी, मुम्बई।
7. स्व. श्रीमती मथुराबाई खुशाल चन्द्र जैन, द्वारा-श्री रतन चन्द खुशाल चन्द्र गाँधी के सुपुत्र श्री धन्य कुमार, अशोक कुमार, शिरीश कुमार, धर्मराज गाँधी फलटन (महा.)।
8. श्री शांतिलाल खुशाल चन्द गाँधी, फलटन (सातारा) महा.।
9. श्री अनन्त लाल फूलचन्द फड़े, अकलूज (सोलापुर) महा.।
10. श्री हीरालाल माणिकलाल गाँधी, अकलूज (सोलापुर) महा.।
11. श्री जयकुमार खुशालचंद गाँधी, अकलूज (सोलापुर) महा.।
12. श्रीमती बदामी देवी मातेश्वरी श्री पदम कुमार जैन गंगवाल, कानपुर (उ.प्र.)।
13. श्रीमती कमलादेवी ध.प. स्व. श्री महेन्द्र कुमार जैन, घण्टे वाले हलवाई, दरियागंज, नई दिल्ली।
14. श्रीमती उषादेवी ध.प. श्री श्रवण कुमार जैन, चावड़ी बाजार, दिल्ली।
15. श्री मुकेश कुमार जैन, कटरा शहंशाही, चाँदनी चौक, दिल्ली।
16. श्री हुकमीचंद मांगीलाल शाह, धानमंडी, उदयपुर (राज.)
17. श्री किरण चन्द्र जैन, कटरा धूलियान, चाँदनी चौक, दिल्ली।
18. श्रीमती विमलादेवी ध.प. श्री महावीर प्रसाद जैन इंजी. विवेक विहार, दिल्ली
19. श्रीमती उषादेवी ध.प. श्री अशोक कुमार जैन (खेकड़ा निवासी), बहराइच (उ.प्र.)।
20. श्रीमती लीलावती ध.प. श्री हरीश चन्द्र जैन, शकरपुर, दिल्ली।
21. श्री दुलीचन्द जैन, बाहुबली एन्कलेव, दिल्ली।
22. श्री रतिलाल केवलचन्द गाँधी की पुण्य स्मृति में, पापुलर परिवार, सूरत (गुज.)।
23. श्रीमती भंवरीदेवी ध.प. श्री सदासुख जैन पांड्या की समृति में इन्दर चन्द सुमेरमल जैन पांड्या शिलांग (मेघालय)।
24. श्रीमती सोहनीदेवी ध.प. श्री तनसुखराय सेठी, फैन्सी बाजार, गौहाटी (आसाम)।
25. श्रीमती धापूबाई ध.प. श्री कस्तूर चन्द जैन, रामगंज मण्डी (राज.)।
26. श्री मिट्ठनलाल चन्द्रभान जैन, कविनगर गाजियाबाद (उ.प्र.)।
27. श्रीमती शकुन्तलादेवी ध.प. श्री सुरेशचंद जैन (बर्तन वाले), खुड़बुड़ा मोहल्लका, देहरादून।
28. श्री देवेन्द्र कुमार गुणवन्त कुमार टोंग्या, बड़नगर (म.प्र.)।
29. श्री दिगम्बर जैन समाज, तहसील फतेहपुर (बाराबंकी) उ.प्र.।
30. श्री मन्नालाल रामलाल जैन डूंगरवाला, भानपुरा (मन्दसौर) म.प्र.।
31. श्री इन्दर चन्द कैलाश चंद चौधरी, सनावद (म.प्र.)।
32. श्री प्रकाश चन्द अमोलक चन्द जैन सर्राफ, सनावद (म.प्र.)।

33. स्व. श्री विमल चन्द जैन, रखबचन्द दसरथ सा, सनावद (म.प्र.)।
34. श्री आजाद कुमार जैन शाह (सनावद वाले), इन्दौर (म.प्र.)।
35. श्रीमती सुषमा जैन ध.प. श्री राकेश कुमार जैन, मवाना (मेरठ) उ.प्र.।
36. श्रीमती कुसुम जैन ध.प. श्री रमेशचन्द जैन, किशनपुरी, बागपत रोड, मेरठ।
37. श्रीमती किरण जैन ध.प. श्री पदम प्रसाद जैन एडवोकेट, मेरठ (उ.प्र.)।
38. श्रीमती विमलादेवी ध.प. श्री जिनेन्द्रप्रसाद जैन ठेकेदार, टोडरमल रोड, नई दिल्ली।
39. श्रीमती क्षमादेवी जैन, मधुबन, दिल्ली।
40. श्रीमती कमलादेवी ध.प. श्री राजेन्द्र कुमार जैन टोडरका, ठाणे (महा.)।
41. श्री अजित प्रसाद जैन बब्बेजी, श्री राजकुमार श्रवण कुमार जैन, लखनऊ।
42. श्री प्रभा चन्द गोधा, 45 भगत वाटिका, सिविल लाइन, जयपुर-6 (राज.)।
43. श्री गोपीचन्द विपिन कुमार जैन, सरधना टैन्ट हाउस, गंजमंडी, सरधना।
44. श्रीमती रतनसुन्दरी देवी ध.प. श्री वीरचन्द जैन (चिकन वाले), चूड़ीवाली गली, चौक बाजार, लखनऊ।
45. डॉ. सुभाषचन्द जैन, रातानाड़ा क्लीनिक, रातानाड़ा बाजार, जोधपुर (राज.)।
46. श्री प्रमोद कुमार जैन (मुजफ्फरनगर वाले) 35 एच.वी.रोड, न्यू मार्केट, थरपकनाग्रांची (बिहार)।
47. श्री विजेन्द्र कुमार जैन, के.-1/20 मॉडल टाउन, दिल्ली।
48. श्री कैलाश चंद जैन, 45 भगत वाटिका, सिविल लाइन, जयपुर (राज.)।
49. श्री सुभाषचंद जैन, श्री दि. जैन पार्श्वनाथ चैत्यालय, 405 डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली।
50. श्री सुभाष चन्द जैन सर्राफ, टिकैतनगर (बाराबंकी) उ.प्र.।
51. श्री चन्द्रसेन जैन, द्वारा-सुमेरचन्द, चन्द्रसेन जैन, सब्जी मण्डी, नहटौर (बिजनौर)।
52. श्री सुधीर कुमार जैन जे.ई., नन्द किशोर जैन, शारदा नहर खण्ड, शाहजहाँपुर।
53. श्री सुकुमालचंद जैन, मोती ट्रेडिंग कम्पनी, टी.आर. फुकन रोड, फैन्सी बाजार, गौहाटी।
54. श्री अनिल पुलकित सेठी, बी 1/122, फेज-2, अशोक विहार, दिल्ली-110052।
55. श्री चन्द्रमोहन बंसल, 11, पूसा रोड, करोलबाग, नई दिल्ली-5।
56. श्री गिरधर प्रसाद आमोद प्रसाद जैन, जैन वस्त्रालय, काली मार्केट, सिवान (बिहार)।
57. श्री सतीश चन्द जैन, 31 सिविल लाइन, म.नं.-10, सेक्टर-2, टाइप-5 झांसी।
58. श्री स्वरूप चन्द कासलीवाल, नया बाजार, अजमेर (राज.)।
59. श्री हुलास चन्द सेठी, अयोध्या शुगर मिल्स, राजा का सहसपुर, बिलारी (उ.प्र.)।
60. श्रीमती किरण देवी जैन ध.प. श्री नरेन्द्र कुमार जैन, सिविल लाइन, सीतापुर (उ.प्र.)।
61. श्रीमती संतोष जैन ध.प. श्री प्रवीण कुमार जैन, बाराबंकी (उ.प्र.)।
62. श्री सूरजमल पुत्र श्री विनीत कुमार जैन, मोहल्ला गंजकटरा पूरणटरा पूरणजाट, कौविला, मुरादाबाद (उ.प्र.)।
63. स्व. श्री शिखर चन्द जैन, 'टिम्बर कमीशन एजेन्ट', शंकरगंज, हापुड़ (उ.प्र.)।
64. श्रीमती राजेश्वरी जैन मातेश्वरी श्री राकेश जैन 31, सिविल लाईन, सीतापुर।
65. श्री राजकुमार जैन, मैसर्स रविदत्त प्रेमचन्द जैन बारदाने वाले, श्यामगंज, बरेली।
66. श्री बलवीर जैन, द्वारा-जानकी एक्सटेंशन रिफाइनरी, गाँधीगंज, शाहजहाँपुर।
67. श्री पन्नालाल सेठी, डीमापुर (नागालैंड)।
68. श्री वीरेन्द्र कुमार जैन, ईदगाह कालोनी, आगरा (उ.प्र.)।
69. श्री पोखपाल जैन, द्वारा-नावेल्टी मेटल इंडिया, मानसिंह गेट, अलीगढ़ (उ.प्र.)।
70. श्रीमती रश्मि जैन ध.प. श्री विजय कुमार जैन, दरियागंज, नई दिल्ली।
71. श्रीमती विमला देवी ध.प. श्री प्रमोद कुमार जैन इंजी., शाहजहाँपुर (उ.प्र.)।
72. स्व. श्रीमती कैलाशवती जैन ध.प. श्री कैलाश चन्द जैन इंजी., तोपखाना बाजार, मेरठ।
73. श्रीमती अरुण कुमार नांद्रेकर ध.प. भाऊ साहेब नांद्रेकर, मुलुन्ड (वेस्ट) मुम्बई।
74. श्री भागचन्द मनीष कुमार ठोलिया, द्वारा-किरन एजेंसी, पो. बुरहानपुर, (म.प्र.)।

75. श्री कैलाशचन्द राजकुमार जैन रावंका, पो. बिसवां (सीतापुर) उ.प्र.।
76. श्रीमती विद्यावती जैन, राजौरी गार्डन, नई दिल्ली।
77. श्री आनन्द प्रकाश जैन (सौरम वाले) एवं सुपुत्र श्री मदन कुमार, प्रदीप कुमार एवं प्रवीण कुमार जैन, धर्मपुरा, गाँधीनगर, दिल्ली।
78. श्रीमती अरुणा जैन, ध.प. प्रवीन्द्र कुमार जैन, प्रीतमपुरा, दिल्ली।
79. श्रीमती पुष्पादेवी, ध.प. महेन्द्र कुमार जैन, पुष्पांजली एन्क्लेव, दिल्ली।
80. श्री बाबूलाल तोताराम जैन, भुसावल (महा.)।
81. डॉ. अनुपम जैन, सुदामा नगर, इंदौर (म.प्र.)।
82. श्री विनय कुमार जैन, ज्वैलर्स, दरीबाकलां, दिल्ली।
83. स्व. श्री आनन्द प्रकाश जैन 'शान्तिप्रिय', जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.।
84. श्रीमती राजुलबाई ध.प. श्री नेमीचन्द जैन लोहाड़े, पो. कोपरगाँव (महा.)।
85. श्री धन्नालाल गोधा, मल्हारगंज, इंदौर (म.प्र.)।
86. श्री सुनील कुमार मनोज कुमार जैन, झिलमिल कालोनी, दिल्ली।
87. श्रीमती आशा जैन ध.प. श्री राजेश कुमार जैन बरुआ सागर (उ.प्र.)।
88. श्री पारसमल डूंगरमल जी पाटनी पो. मेड़तासिटी, नागौर (राजस्थान)।
89. श्री अनिल कुमार जैन (गुड़गांव वाले) प्रियदर्शनी विहार, दिल्ली-92।
90. श्रीमती कृष्णा बाई नेमीनाथ जैन, पी. वाले, हैदराबाद (आन्ध्र प्रदेश)।
91. श्रीमती मंजूलता जैन ध.प. श्री प्रभात चन्द गोधा, नया बाजार, अजमेर (राज.)।
92. श्री प्रमोद कुमार जैन, पारस प्रिन्टर्स, शाहदरा-दिल्ली।
93. श्री चांदमल अनिल कुमार सरावगी, किशनगंज (बिहार)।
94. कुमारी अदिती सुपुत्री श्री अपोलो जी जैन सौगानी, इंदौर।
95. श्रीमती मंजूलता ध.प. प्रभाचन्द गोधा-नया बाजार, अजमेर।
96. श्री सुचेद्र कुमार शैलेन्द्र कुमार जैन, डाल्टनगंज (झारखंड)।
97. श्रीमती जतनदेवी लक्ष्मीचंद जैन, चेन्नई (तमिलनाडु)।
98. श्रीमती सखाई जैन ध.प. श्री जीतमल जैन, मड़ाना (कोटा) राज.।
99. श्री मोहित जैन पुत्र मुकेश जैन, जगन्नाथ जैन पहाड़िया, फतेहपुर (शेखावटी) राज.।
100. श्री नरेश जैन बंसल, गुड़गाँवा (हरि.)।
101. श्रीमती रतनबाई ध.प. राजेन्द्र प्रकाश कोठिया, कोटा (राज.)।
102. श्रीमती संतोष जैन ध.प. श्री अजीत कुमार जैन, भिवाड़ी (राज.)।
103. श्रीमती प्रेमलता जैन ध.प. श्री सुशील कुमार जैन, मलाड़ (मुम्बई)।
104. श्री राजेन्द्र कुमार पंचौलिया, इंदौर (म.प्र.)।
105. स्व. श्री मोहनलाल हेमचंद गांधी, सतारा (महा.)।
106. श्रीमती आरती जैन ध.प. श्री प्रकाशचंद जैन 'शीशे वाले', इलाहाबाद (उ.प्र.)
107. डॉ. विमला जैन ''विमल'' ध.प. श्री प्रकाशचंद जैन, फिरोजाबाद (उ.प्र.)

विषय-दर्पण

क्र.	विषय	पृष्ठ संख्या
1.	समवसरण का वर्णन	1
2.	समवसरण वंदना	6
3.	समवसरण मानस्तंभ स्तोत्र	9
4.	समवसरण चैत्यप्रासाद भूमि स्तोत्र	25
5.	समवसरण चैत्यवृक्ष स्तोत्र	30
6.	समवसरण सिद्धार्थवृक्ष स्तोत्र	46
7.	समवसरण स्तूप स्तोत्र	63
8.	तीर्थंकर धर्मचक्र स्तोत्र	74
9.	समवसरण गंधकुटी स्तोत्र	86
10.	समवसरण विंशतिका	92

समवसरण का वर्णन

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथतीर्थंकराय नमः

भगवान को केवलज्ञान प्रगट होते ही इन्द्र की आज्ञा से कुबेर अर्धनिमिष में समवसरण की रचना कर देता है। उस समय भगवान तीनों लोकों को और उनकी भूत, भावी, वर्तमान समस्त पर्यायों को युगपत् एक समय में जान लेते हैं।

भगवान शांतिनाथ का समवसरण पृथ्वी से 5000 धनुष (20000 हाथ) ऊपर आकाश में अधर है। पृथ्वी से एक हाथ ऊपर से एक-एक हाथ ऊँची बीस हजार सीढ़ियाँ हैं। इनसे चढ़कर मनुष्य और तिर्यंच आदि सभी भव्य जीव-बाल, वृद्ध, अंधे, लूले, लंगड़े, रोगी आदि अंतर्मुहूर्त (48 मिनट) में ऊपर पहुँच जाते हैं। भगवान ऋषभदेव का समवसरण 12 योजन (96 मील) का है। आगे घटते-घटते महावीर स्वामी का समवसरण एक योजन (8 मील) का है।

इसमें चार परकोटे और पाँच वेदियाँ हैं। इनके आठ भूमियाँ हैं। चारों दिशाओं में बहुत ही विस्तृत वीथी बड़ी-बड़ी गलियाँ हैं।

इस समवसरण में क्रम से पहले धूलिसाल परकोटा, चैत्यप्रासाद भूमि,

वेदी, खातिकाभूमि, वेदी, लताभूमि, परकोटा, उपवनभूमि, वेदी, ध्वजभूमि, परकोटा, कल्पभूमि, वेदी, भवनभूमि, परकोटा, श्रीमण्डपभूमि और वेदी है। आगे 16 सीढ़ी ऊपर चढ़कर पहली कटनी, 8 सीढ़ी चढ़कर दूसरी कटनी, पुनः 8 सीढ़ी चढ़कर तीसरी कटनी है। इसी पर भगवान विराजमान हैं।

प्रत्येक परकोटे और वेदियों में चारों दिशाओं में एक-एक गोपुर द्वार हैं। जिनमें से पूर्वदिशा में "विजय", दक्षिण में "वैजयंत" पश्चिम में "जयंत" और उत्तर में "अपराजित" ऐसे नाम हैं। इन चारों के उभय पार्श्व में दो-दो नाट्यशालाएं हैं, जिनमें देवांगनाएं भगवान की भक्ति में विभोर हो नृत्य-गान करती रहती हैं। वहाँ द्वारों के दोनों और नवनिधि, मंगलघट और धूपघट आदि स्थित हैं। प्रत्येक परकोटे के द्वारों पर देवगण हाथ में दण्ड, मुद्गर आदि लेकर रक्षक बनकर खड़े हुए हैं।

24 तीर्थंकरों के समवसरण का प्रमाण

1.	भगवान ऋषभदेव का समवसरण	12 योजन (96 मील)
2.	भगवान अजितनाथ का समवसरण	$11\frac{1}{2}$ योजन (92 मील)
3.	भगवान संभवनाथ का समवसरण	11 योजन (88 मील)
4.	भगवान अभिनंदननाथ का समवसरण	$10\frac{1}{2}$ योजन (84 मील)
5.	भगवान सुमतिनाथ का समवसरण	10 योजन (80 मील)
6.	भगवान पद्मप्रभु का समवसरण	$9\frac{1}{2}$ योजन (76 मील)
7.	भगवान सुपार्श्वनाथ का समवसरण	9 योजन (72 मील)
8.	भगवान चंद्रप्रभ का समवसरण	$8\frac{1}{2}$ योजन (68 मील)
9.	भगवान पुष्पदंतनाथ का समवसनण	8 योजन (64 मील)
10.	भगवान शीतलनाथ का समवसरण	$7\frac{1}{2}$ योजन (60 मील)
11.	भगवान श्रेयांसनाथ का समवसरण	7 योजन (56 मील)
12.	भगवान वासुपूज्यनाथ का समवसरण	$6\frac{1}{2}$ योजन (52 मील)
13.	भगवान विमलनाथ का समवसरण	6 योजन (48 मील)
14.	भगवान अनंतनाथ का समवसरण	$5\frac{1}{2}$ योजन (44 मील)
15.	भगवान धर्मनाथ का समवसरण	5 योजन (40 मील)
16.	भगवान शांतिनाथ का समवसरण	$4\frac{1}{2}$ योजन (36 मील)

17. भगवान कुंथुनाथ का समवसरण 4 योजन (32 मील)
18. भगवान अरनाथ का समवसरण $3\frac{1}{2}$ योजन (28 मील)
19. भगवान मल्लिनाथ का समवसरण 3 योजन (24 मील)
20. भगवान मुनिसुव्रतनाथ का समवसरण $2\frac{1}{2}$ योजन (20 मील)
21. भगवान नमिनाथ का समवसरण 2 योजन (16 मील)
22. भगवान नेमिनाथ का समवसरण $1\frac{1}{2}$ योजन (12 मील)
23. भगवान पार्श्वनाथ का समवसरण $1\frac{1}{4}$ योजन (10 मील)
24. भगवान महावीर स्वामी का समवसरण 1 योजन (8 मील)

समवसरण में प्रवेश करते ही चारों गली में दिव्य रत्नमय मानस्तंभ हैं जो कि भगवान से बारहगुने ऊँचे हैं। जैसे कि– भगवान शांतिनाथ के शरीर की ऊँचाई 160 हाथ है अतः ये बारहगुणे अर्थात् 160×12=1920 हाथ ऊँचे हैं। बीस योजन तक प्रकाश फैलाते हैं। इनके दर्शन से मानी का मान गलित हो जाता है और वह भव्यात्मा सम्यग्दृष्टि बनकर अनंत संसार को सीमित कर लेता है।

केवली भगवान के प्रभाव से चारों तरफ चार सौ कोस तक सुभिक्षता, हिंसा और उपसर्गादि का अभाव, सभी जन्मजात शत्रु-सिंह, हिरण आदि का आपस में मैत्री भाव, छहों ऋतुओं के फल-फूलों का एक साथ आ जाना आदि अतिशय हो जाते हैं।

भगवान के श्रीविहार में आकाश में अधर, उनके चरण के नीचे देवगण स्वर्णमय सुगंधित दिव्य कमलों को रचते जाते हैं और अहिंसा धर्म के दिग्विजय को सूचित करता हुआ 'धर्मचक्र' भगवान के आगे-आगे चलता है एवं सरस्वती-लक्ष्मी देवी आजू-बाजू में चलती हैं। आकाशगामी ऋद्धिधारी साथ में चलते हैं, असंख्य देव-देवियाँ, इन्द्रादिगण पीछे-पीछे चलते हैं एवं साधारण मुनि, आर्यिकाएं, मनुष्य, पशु आदि नीचे-नीचे चलते हैं। जहाँ भगवान रुक जाते हैं वहाँ पुनः कुबेर समवसरण की रचना कर देता है।

समवसरण में आठ भूमि और तीन कटनी

1. पहली ''चैत्यप्रासादभूमि'' है, इसमें एक-एक जिनमंदिर के अंतराल में पांच-पांच प्रासाद हैं।

2. दूसरी ''खातिकाभूमि'' है, इसके स्वच्छ जल में हंस आदि कलरव कर

रहे हैं और कमल आदि पुष्प खिले हैं।

3. तीसरी ''लताभूमि'' है, इसमें छहों ऋतुओं के पुष्प खिले हुए हैं।

4. चौथी ''उपवनभूमि'' है, इसमें पूर्व आदि दिशा में क्रम से अशोक, सप्तच्छद, चंपक और आम्र के वन हैं। प्रत्येक वन में एक-एक चैत्यवृक्ष हैं जिनमें 4-4 जिनप्रतिमाएं विराजमान हैं। प्रत्येक प्रतिमाओं के सामने एक-एक मानस्तंभ हैं।

5. पांचवी ''ध्वजाभूमि'' है, इसमें सिंह, गज, वृषभ, गरुड़, मयूर, चन्द्र, सूर्य, हंस, पद्म और चक्र इन दस चिन्हों से सहित महाध्वजाएं और उनके आश्रित लघुध्वजाएं 108-108 हैं। सब मिलाकर 4,70,880 हैं।

6. छठी ''कल्पभूमि'' है, इसमें भूषणांग आदि दस प्रकार के कल्पवृक्ष हैं। चारों दिशा में क्रम से नमेरु, मंदार, संतानक और पारिजात ऐसे एक-एक सिद्धार्थवृक्ष हैं। इनमें चार-चार सिद्धप्रतिमाएं विराजमान हैं ।

7. सातवीं ''भवनभूमि'' में भवन बने हुए हैं। इस भूमि के पार्श्व भागों में अर्हंत और सिद्धप्रतिमाओं से सहित नौ-नौ स्तूप हैं।

8. आठवीं ''श्रीमण्डपभूमि'' है, इसमें 16 दीवालों के बीच में 12 कोठे हैं जिनमें 1. गणधरादि मुनि, 2. कल्पवासिनी देवी, 3. आर्यिका और श्राविका, 4. ज्योतिषी देवी, 5. व्यंतर देवी, 6. भवनवासिनी देवी, 7. भवनवासी देव, 8. व्यंतर देव, 9. ज्योतिष देव, 10. कल्पवासी देव, 11. चक्रवर्ती आदि मनुष्य और 12. सिंहादि तिर्यंच, ऐसे बारहगण के असंख्यातों भव्यजीव बैठकर धर्मोपदेश सुनते हैं। वहां पर रोग, शोक, जन्म, मरण, उपद्रव आदि बाधाएं नहीं हैं।

प्रथम कटनी पर पूजा द्रव्य एवं मंगल द्रव्य रखे हुए हैं। इसी प्रथम कटनी पर चारों दिशाओं में यक्षेन्द्र अपने मस्तक पर धर्मचक्र धारण किये हुए हैं।

द्वितीय कटनी पर सिंह, बैल, कमल, चक्र, माला, गरुड़ और हाथी इन आठ चिन्हों से युक्त महाध्वजाएं हैं तथा धूपघट, नवनिधियाँ, पूजन द्रव्य एवं मंगलद्रव्य स्थित हैं।

तृतीय कटनी पर गंधकुटी में सिंहासन पर लाल कमल की कर्णिका पर भगवान शांतिनाथ चार अंगुल अधर विराजमान हैं। इनका मुख एक तरफ होते हुए भी चारों तरफ दिखने से ये चतुर्मुखी ब्रह्मा कहलाते हैं। भगवान के पास

अशोकवृक्ष, तीन छत्र, सिंहासन, भामंडल, चौंसठ चंवर, सुरपुष्पवृष्टि, दुंदुभि बाजे और हाथ जोड़े सभासद ये आठ महाप्रातिहार्य हैं। सभी समवसरण में उन-उन तीर्थंकर के शासन देव-देवी विद्यमान हैं। जैसे कि भगवान शांतिनाथ के समवसरण में गरुड़ यक्ष और महामानसी यक्षी विद्यमान हैं।

श्री शांतिनाथ भगवान को मेरा अनंतबार नमस्कार हो।

इस समवसरण का वर्णन तिलोयपण्णत्ति, हरिवंशपुराण और समवसरण स्तोत्र के आधार से हैं।

सप्तस्तोत्र का वर्णन–

1. **'समवसरण मानस्तंभ स्तोत्र'** में चौबीसों तीर्थंकरों के समवसरण में प्रथम भूमि की वीथी में स्थित मानस्तंभों के जिनबिम्बों का स्तवन है।

2. **'समवसरण चैत्यप्रासाद भूमि स्तोत्र'** में समवसरण में प्रथम चैत्यप्रासाद भूमि है। इसमें स्थित जिनमंदिरों का स्तोत्र है।

3. **'समवसरण चैत्यवृक्ष स्तोत्र'** में चौबीसों तीर्थंकरों के समवसरण में चौथी उपवन भूमि में स्थित चैत्यवृक्षों के जिनबिम्बों का स्तवन है।

4. **'समवसरण सिद्धार्थवृक्ष स्तोत्र'** में चौबीसों तीर्थंकरों के समवसरण में छठी भूमि–कल्पभूमि में स्थित सिद्धार्थवृक्षों की सिद्धप्रतिमाओं का स्तवन है।

5. **'समवसरण स्तूप स्तोत्र'** में चौबीसों तीर्थंकरों के समवसरण में सातवीं भूमि में स्थित नव–नव स्तूपों में विराजमान जिन और सिद्ध प्रतिमाओं का स्तवन है।

6. **'तीर्थंकर धर्मचक्र स्तोत्र'** में चौबीसों तीर्थंकरों के समवसरण में आठ भूमि के बाद भगवान की गंधकुटी के नीचे प्रथम कटनी पर यक्षेंद्रों के मस्तक पर स्थित धर्मचक्र का स्तवन है।

7. **'समवसरण गंधकुटी स्तोत्र'** में समवसरण में तृतीय कटनी पर गंधकुटी है इसी में तीर्थंकर भगवान विराजमान रहते हैं। यह उस गंधकुटी का स्तोत्र है।

समवसरण वंदना

–दोहा–

चिन्मय चिंतामणि प्रभो, गुण अनंत की खान।
समवसरण वैभव सकल, वह लवमात्र समान।।1।।

–शंभुछंद–

जय जय तीर्थंकर क्षेमंकर, तुम धर्म चक्र के कर्ता हो।
जय जय अनंतदर्शन सुज्ञान, सुखवीर्य चतुष्टय भर्त्ता हो।।
जय जय अनंत गुण के धारी, प्रभु तुम उपदेश सभा न्यारी।
सुरपति की आज्ञा से धनपति, रचता है त्रिभुवन मनहारी।।2।।

प्रभु समवसरण गगनांगण में, बस अधर बना महिमाशाली।
यह इंद्र नीलमणि रचित गोल, आकार बना गुणमणिमाली।।
सीढ़ी इक एक हाथ ऊँची, चौड़ी सब बीस हजार बनी।
नर बाल वृद्ध लूले लंगड़े, चढ़ जाते सब अतिशायि घनी।।3।।

पहला परकोटा धूलिसाल, बहुवर्ण रत्न निर्मित सुंदर।
कहिं पद्मराग कहिं मरकतमणि, कहिं इन्द्रनीलमणि से मनहर।।
इसके अभ्यंतर चारों दिश, हैं मानस्तंभ बने ऊँचे।
ये बारह योजन से दिखते[1], जिनवर से द्विदश गुण ऊँचे।।4।।
इनमें चारों दिश जिनप्रतिमा उनको सुरपति नरपति यजते।
ये सार्थक नाम धरें दर्शन से, मानो मान गलित करते।।
इस समवसरण के चार कोट, अरु पाँच वेदिकायें ऊँची।
इनके अंतर में आठ भूमि फिर प्रभु की गंधकुटी ऊँची।5।।

इस धूलिसाल अभ्यंतर में है भूमि चैत्यप्रासाद प्रथम।
एकेक जैन मंदिर अंतर से, पाँच पाँच प्रासाद सुगम।।
चारों गलियों में उभय तरफ दो दोय नाट्याशालायें हैं।
अभिनय करतीं जिनगुण गातीं, सुर भवनवासि कन्यायें हैं।।6।।

1. हरिवंश पुराण

फिर वेदी वेढ़ रही ऊँची, गोपुर द्वारों से युक्त वहाँ।
द्वारों पर मंगलद्रव्य निधी, ध्वज तोरण घंटा ध्वनी महा।।
फिर आगे खाई स्वच्छ नीर से, भरी दूसरी भूमी है।
फूले कुवलय कमलों से युत, हंसों के कलरव की ध्वनि है।।7।।

फिर दूजी वेदी के आगे, तीजी है लताभूमि सुन्दर।
बहुरंग बिरंगे पुष्प खिले, जो पुष्पवृष्टि करते मनहर।।
फिर दूजा कोट बना स्वर्णिम, गोपुर द्वारों से मन हरता।
नवनिधि मंगल घट धूप घटों, युत में प्रवेश करती जनता।।8।।

आगे उद्यान भूमि चौथी, चारों दिश बने बगीचे हैं।
क्रम से अशोक वन सप्तपर्ण, चंपक अरु आम्र तरु के हैं।।
प्रत्येक दिशा में एक एक, तरु चैत्यवृक्ष अतिशय ऊँचे।
इनमें जिन प्रतिमा प्रातिहार्ययुत, चार चार मणिमय दीखें।।9।।

इसके आगे वेदी सुन्दर, फिर ध्वजाभूमि ध्वज से शोभे।
फिर रजतवर्णमय परकोटा, गोपुर द्वारों से युत शोभे।।
फिर कल्पवृक्ष भूमी छट्ठी, दशविध के कल्पवृक्ष इसमें।
प्रतिदिश सिद्धार्थ वृक्ष चारों हैं, सिद्धों की प्रतिमा उनमें।।10।।

चौथी वेदी के बाद भवन, भूमी सप्तमि के उभय तरफ।
नव नव स्तूप रत्न निर्मित, उनमें जिनवर प्रतिमा सुखप्रद।।
परकोटा स्फटिकमयी चौथा, मरकत मणि गोपुर से सुन्दर।
उस आगे श्रीमंडप भूमी, बारह कोठों से जनमनहर।।11।।

फिर पंचम वेदी के आगे, त्रय कटनी सुन्दर दिखती हैं।
पहली कटनी पर यक्ष शीश पर, धर्मचक्र चारों दिश हैं।।
दूजी कटनी पर आठ महाध्वज, नवविधि मंगल द्रव्य धरे।
तीजी कटनी पर गंधकुटी पर, जिनवर दर्शन पाप हरें।।12।।

जय जय जिनवर सिंहासन पर, चतुरंगुल अधर विराज रहे।
जय जय जिनवर की दिव्यध्वनी, सुनकर सब भविजन तृप्त भये।।
सब जातविरोधी प्राणीगण, आपस में मैत्री भाव धरें।
जो वंदे ध्यावें गुण गावें, वे ज्ञानमती कैवल्य करें।।13।।

–दोहा–

चतुर्मुखी ब्रह्मा तुम्हीं, ज्ञान व्याप्त जग विष्णु।
देवों के भी देव हो, महादेव अरि जिष्णु।।14।।

चारित्र के बिना मात्र ज्ञान सिद्धिदायक नहीं है

सव्वं पिहि सुदणाणं सुट्ठु सुगुणिदं पि सुट्ठु पढिदं पि।
समणं भट्ठचरित्तं णहु सक्को सुग्गइं णेदुं।।14।।
जडि पडदि दीवहत्थो अवडे किं कुणदि तस्स सो दीवो।
जदि सिक्खिऊण अयणं करेदि किं तस्स सिक्ख फलं।।15।।

अर्थ– संपूर्ण भी श्रुतज्ञान कालादि शुद्धिपूर्वक प्राप्त किया गया है तथा परिणामों की विशुद्धि से बारम्बार उसका अभ्यास भी किया गया है उसका व्याख्यान करने से तथा हृदय से सम्यक्धारण करने पर भी वह ज्ञान भ्रष्ट-चारित्र यति को अथवा चारित्र रहित को सद्गति में पहुँचाने के लिए समर्थ नहीं है। अतः चारित्र ही प्रधान है।

यदि दीपक हाथ में होते हुए भी कोई गड्ढे या कुएं में गिरता है तो दीपक उसका क्या करेगा? यदि ज्ञान प्राप्त करके भी कोई अनय-चरित्र का विनाश करता है तो उसकी शिक्षा का क्या फल है? अर्थात् श्रुतज्ञान का फल चारित्र धारण करना है यदि पढ़कर भी चारित्र से विमुख रहा तो वह ज्ञान के फल को नहीं प्राप्त कर सकता है।

–श्री कुन्दकुन्द देव

समवसरण
मानस्तंभ स्तोत्र

–शंभुछंद–

चौबिस तीर्थंकर वंदन कर, उन प्रभु के समवसरण प्रणमूं।
प्रभु समवसरण में चारों दिश, मानस्तंभों को नित्य नमूं।।
मानस्तंभों में चारों दिश, जिनवर प्रतिमा को कोटि नमूं।
जिनप्रतिमा को वंदन कर–कर, क्षायिक सम्यक्त्व सदा प्रणमूं।।1।।

एकेक प्रभू के चार–चार, हैं मानस्तंभ चमत्कारी।
चौबिस प्रभु के छ्यानवे कहे, ये सब अतिशायि सौख्यकारी।।
मानी का मान गलित करते, सम्यक्त्व रत्न को देते हैं।
इनकी पूजा करते जो जन, संसार भ्रमण हर लेते हैं।।2।।

मानस्तंभों में चारों दिश, जिनप्रतिमायें सुंदर शोभें।
गणधर मुनिगण सुरगण नमते, भविजन वंदें दुःख से छूटें।।
इनका वंदन कर गौतम को, प्रभु का गणधर पद प्राप्त हुआ।
मैं नमूं नमूं नित श्रद्धा से, मेरा जीवन भी धन्य हुआ।।3।।

–नरेन्द्र छंद–

धूलिसाल के अभ्यंतर में चारों दिश वीथी में।
मानस्तंभ रत्नमणि निर्मित शोभें चारों दिश में।।
उनमें चारों दिश जिनप्रतिमा भक्ति भाव से वंदूँ।
जिनप्रतिमा का वंदन करके कर्म शत्रु को खंडूँ।।4।।

(1)

–रोला छंद–

वृषभदेव के समवसरण में चारों दिश में।
वीथी दो–दो कोश चौड़ी उन पूरब में।।

मानस्तंभ अपूर्व, चारों दिश जिनप्रतिमा।
वंदूँ शीश नमाय, होवे सौख्य अनुपमा।।1।।

समवसरण में दक्षिण दिश में शोभ रहा है।
मानस्तंभ विचित्र मुनिगण पूज्य कहा है।।
उसमें शिखर समीप चहुँदिश जिनप्रतिमाएँ।
वंदूँ शीश नमाय अनुपम सौख्य दिलाएँ।।2।।

पश्चिम दिश की महा, गली में रत्नविनिर्मित।
मानस्तंभ जिनेश, का मिथ्यात्वी मदहृत्।।
उसमें शिखर समीप चहुँदिश जिनप्रतिमाएँ।
वंदूँ शीश नमाय अनुपम सौख्य दिलाएँ।।3।।

उत्तर दिश में तुंग, मानस्तंभ विराजे।
जो वंदें धर प्रीत उनके पातक भाजें।।
उसमें शिखर समीप चहुँदिश जिनप्रतिमाएँ।
वंदूँ शीश नमाय अनुपम सौख्य दिलाएँ।।4।।

(2)

अजितनाथ जिनदेव, समवसरण में राजें।
पूरब दिश में तुंग मानस्तंभ विराजें।।
उसमें शिखर समीप चहुँदिश जिनप्रतिमाएँ।
वंदूँ शीश नमाय अनुपम सौख्य दिलाएँ।।5।।

दक्षिण दिश में श्रेष्ठ मानस्तंभ अपूरब।
बारहगुणा जिनेश, तनु से तुंग रतनप्रभ।।
उसमें शिखर समीप चहुँदिश जिनप्रतिमाएँ।
वंदूँ शीश नमाय अनुपम सौख्य दिलाएँ।।6।।

पश्चिम दिश में तुंग, मानस्तंभ दिखे है।
सुरपति नरपति वंद्य कांतीमान दिपे है।।

उसमें शिखर समीप चहुँदिश जिनप्रतिमाएँ।
वंदूँ शीश नमाय अनुपम सौख्य दिलाएँ।।7।।

समवसरण में उत्तर दिश में महा गली में।
मानस्तंभ सुरत्न मणिमय शोभे जग में।।
उसमें शिखर समीप चहुँदिश जिनप्रतिमाएँ।
वंदूँ शीश नमाय अनुपम सौख्य दिलाएँ।।8।।

(3)

–दोहा–

श्री संभव जिनराज का, समवसरण जगवंद्य।
मानस्तंभ सुपूर्व दिशि, वंदूँ जिनवर बिंब।।9।।

समवसरण में दक्षिणी, दिश में मानस्तंभ।
अग्रभाग में चहुँ दिशी, वंदूँ जिनवर बिंब।।10।।

समवसरण में अपर दिशि, मानस्तंभ अपूर्व।
शिखर भाग में चहुँ दिशी, वंदूँ जिनवर सूर्य।।11।।

उत्तर दिशि मुनिनाथनुत, मानस्तंभ महान।
शिखर भाग जिनबिंब को, नमूँ जोड़ जुग पान।।12।।

(4)

अभिनंदन जिनराज का, समवसरण गुणखान।
पूरब मानस्तंभ को, नमूँ मिले सुखखान।।13।।

समवसरण में दक्षिणी, दिश में मानस्तंभ।
शिखर भाग में चहुँदिशी, वंदूँ जिनवर बिंब।।14।।

समवसरण में अपरदिशि, मानस्तंभ अनिंद्य।
चहुँदिश के जिनबिंब को, वंदूँ सुर–नर वंद्य।।15।।

समवसरण में उत्तरी, दिश में मानस्तंभ।
चहुँदिश के जिनबिंब को नमूँ हरूँ जग दंभ।।16।।

(5)

–चौपाई-

सुमतिनाथ की सभा अनिंद्य, समवसरण है त्रिभुवनवंद्य।
पूर्वदिशा में मानस्तंभ, नमूँ चतुर्दिश के जिनबिंब।।17।।

समवसरण सब दुख हरतार, पूजत ही सब भरे भंडार।
दक्षिण दिश में मानस्तंभ, नमूँ चतुर्दिश के जिनबिंब।।18।।

समवसरण में बारह सभा, मुनिगण गाते जिनगुणकथा।
पश्चिमदिश में मानस्तंभ, नमूं चतुर्दिश के जिनबिंब।।19।।

इंद्रनील मणि से बन रही, कमलाकार सभा शुभ कही।
उत्तरदिश में मानस्तंभ, नमूँ चतुर्दिश के जिनबिंब।।20।।

(6)

पद्मप्रभूजिन गुणमणि भरे, उनका समवसरण मन हरे।
पूरबदिश में मानस्तंभ, नमूँ चतुर्दिश के जिनबिंब।।21।।
समवसरण में भूमी आठ, दर्शन से हो मंगल ठाठ।
दक्षिण दिश में मानस्तंभ, नमूँ चतुर्दिश के जिनबिंब।।22।।

समवसरण सब सुख दातार, वंदत भरते गुण भंडार।
पश्चिमदिश में मानस्तंभ, नमूँ चतुर्दिश के जिनबिंब।।23।।

जिनवर समवसरण अभिराम, नित्तप्रति शतशत करूँ प्रणाम।
उत्तरदिश में मानस्तंभ, नमूँ चतुर्दिश के जिनबिंब।।24।।

(7)

श्री सुपार्श्वजिन त्रिभुवन ईश, समवसरण को नाऊँ शीश।
पूरबदिश में मानस्तंभ, नमूँ चतुर्दिश के जिनबिंब।।25।।

समवसरण में कोट उतुंग, पहरा देते नित सुरवृंद।
दक्षिणदिश में मानस्तंभ, नमूँ चतुर्दिश के जिनबिंब।।26।।

धनद रचित जिनसभा अपूर्व, गणधर कहें अंगअरु पूर्व।
पश्चिमदिश में मानस्तंभ, नमूँ चतुर्दिश के जिनबिंब।।27।।

समवसरण में वेदी पाँच, चार कोट भू आठ विभांत।
उत्तरदिश में मानस्तंभ, नमूँ चतुर्दिश के जिनबिंब।।28।।

(8)

चंदाप्रभु जिनकी शुभसभा, हरती भक्तजनों की व्यथा।
पूरब दिश में मानस्तंभ, नमूँ चतुर्दिश के जिनबिंब।।29।।

समवसरण का नाम पवित्र, करता शत्रुगणों को मित्र।
दक्षिणदिश में मानस्तंभ, नमूँ चतुर्दिश के जिनबिंब।।30।।

समवसरण भवदधि का कूल, वंदत ही सब हों अनुकूल।
पश्चिम दिश में मानस्तंभ, नमूँ चतुर्दिश के जिनबिंब।।31।।

जिनवर समवसरण जगवंद्य, वहाँ रहें सुरनर पशु वृन्द।
उत्तरदिश में मानस्तंभ, नमूँ चतुर्दिश के जिनबिंब।।32।।

(9)

–पद्धड़ी छंद–

श्री पुष्पदंत का समवसर्ण, वंदन से नशता जन्ममर्ण।
पूरबदिशि मानस्तंभ एक, जिनप्रतिमा वंदूँ माथ टेक।।33।।

जिन समवसरण में गली चार, सीढ़ी उनमें बीसहिं हजार।
दक्षिण दिशि मानस्तंभ एक, जिनप्रतिमावंदूँ माथ टेक।।34।।

जिनसमवसरण में मुनि वसंत, जिन धुनि सुन करते कर्म अंत।
पश्चिम दिशि मानस्तंभ एक, जिनप्रतिमा वंदूँ माथ टेक।।35।।

जिन समवसरण रचता कुबेर, बस अर्ध निमिष नहिं लगे देर।
उत्तर दिशि मानस्तंभ एक, जिनप्रतिमा वंदूँ माथ टेक।।36।।

(10)

शीतल जिनका जो समवसरण, सब भव्यों को दे रहा शरण।
पूरब दिशि मानस्तंभ एक, जिनप्रतिमा वंदूँ माथ टेक।।37।।

इस समवसरण में तीर्थनाथ, करते सब भक्तों को सनाथ।
दक्षिण दिशि मानस्तंभ एक, जिनप्रतिमा वंदूँ माथ टेक।।38।।

जो समवसरण में तरु अशोक, भव्यों का हरता सर्व शोक।
पश्चिम दिशि मानस्तंभ एक, जिनप्रतिमा वंदूँ माथ टेक।।39।।

शीतल की धुनि शीतल करंत, भवताप हरे मंगल भरंत।
उत्तर दिशि मानस्तंभ एक, जिनप्रतिमा वंदूँ माथ टेक।।40।।

(11)

श्रेयांसनाथ का समवसर्ण, गणधर मुनिगण भी लेय शर्ण।
पूरबदिशि मानस्तंभ एक, जिनप्रतिमा वंदूँ माथ टेक।।41।।

जिन समवसरण में प्रातिहार्य, भक्तों के पूरण करें कार्य।
दक्षिणदिशि मानस्तंभ एक, जिनप्रतिमा वंदूँ माथ टेक।।42।।

भामंडल छवि का अतिप्रकाश, लजते करोड़ सूरज प्रकाश।
पश्चिमदिशि मानस्तंभ एक, जिनप्रतिमा वंदूँ माथ टेक।।43।।

सुर पुष्पवृष्टि निशिदिन करंत, जय जय ध्वनि करते हर्षवंत।
उत्तरदिशि मानस्तंभ एक, जिनप्रतिमा वंदूँ माथ टेक।।44।।

(12)

जिनवासुपूज्य सुरवृन्द पूज्य, उन समवसरण अतिशय विशुद्ध्य।
पूरब दिशि मानस्तंभ एक, जिनप्रतिमा वंदूँ माथ टेक।।45।।

जिन ऊपर चौंसठ चमर स्वच्छ, ढोरें नित चौंसठ देवयक्ष।
दक्षिणदिशि मानस्तंभ एक, जिनप्रतिमा वंदूँ माथ टेक।।46।।

सिंहासन रत्नजड़ा विचित्र, नित अधर विराजे जिनपवित्र।
पश्चिमदिशि मानस्तंभ एक, जिनप्रतिमा वंदूँ माथ टेक।।47।।

बाजे साढ़े बारह करोड़, दुंदुभि बाजे बजते अजोड़।
उत्तरदिशि मानस्तंभ एक, जिनप्रतिमा वंदूँ माथ टेक।।48।।

(13)

–शंभु छंद–

जिन विमलनाथ का समवसरण, है अमल अखंड सौख्यदाता।
उसमें नवनिधियाँ भरी पड़ीं, बहु वैभव कोइ न कह पाता।।
जिनवर से बारह गुणा तुंग, पूरब दिश मानस्तंभ बना।
उसमें चारों दिश जिनप्रतिमा, मैं वंदूँ मन आनंद घना।।49।।

जिन समवसरण में धूपघटों में सुरगण धूप खेवते हैं।
सुरभित चारों दिशि धुंआं उड़े, भवि जिनपद कंज सेवते हैं।।
जिनवर से बारह गुणा तुंग, दक्षिण दिशि मानस्तंभ बना।
उसमें चारों दिश जिनप्रतिमा, मैं वंदूँ मन आनंद घना।।50।।

जिन समवसरण में गोपुर के, दोनों तरफी नाटकशाला।
वहाँ देव अप्सरा नृत्य करें, गावें नितप्रति जिन गुणमाला।।
जिनवर से बारह गुणा तुंग, पश्चिम में मानस्तंभ बना।
उसमें चारों दिश जिनप्रतिमा, मैं वंदूँ मन आनंद घना।।51।।

मानस्तंभों के चारों दिश, वापी के सन्निध कुंड बने।
उनमें जन पैर धूलि धोकर, अंदर प्रवेश कर पाप हने।।
जिनवर से बारह गुणा तुंग, उत्तर दिश मानस्तंभ बना।
उसमें चारों दिश जिनप्रतिमा, मैं वंदूँ मन आनंद घना।।52।।

(14)

जिनवर अनंत का समवसरण, दर्शन से अंतक[1] भय हरता।
जिनगुण अनंत प्रगटित करके, भव्यों के गुण विकसित करता।।

1. मृत्यु का।

जिनवर से बारह गुणा तुंग, पूरब दिशि मानस्तंभ बना।
उसमें चारों दिश जिनप्रतिमा, मैं वंदूँ मन आनंद घना।।53।।

जिन समवसरण में आठ द्रव्य, मंगलमय बहुत जगह रहते।
दर्शक जन का मंगल करते, चहुंदिशी अमंगल को हरते।।
जिनवर से बारह गुणा तुंग, दक्षिण दिशि मानस्तंभ बना।
उसमें चारों दिश जिनप्रतिमा, मैं वंदूँ मन आनंद घना।।54।।

जो समवसरण में जिनदर्शन, करते वे भव्य कहाते हैं।
वे निश्चित ही उस भव या कुछ, भव लेकर शिवश्री पाते हैं॥
जिनवर से बारह गुणा तुंग, पश्चिम दिशि मानस्तंभ बना।
उसमें चारों दिश जिनप्रतिमा, मैं वंदूँ मन आनंद घना।।55।।

जिन समवसरण में मिथ्यात्वी, अभिमानी क्षुद्र न जा सकते।
जो सम्यग्दृष्टी होते हैं, वे ही जिनवर दर्शन करते।।
जिनवर से बारह गुणा तुंग, उत्तर दिशि मानस्तंभ बना।
उसमें चारों दिश जिनप्रतिमा, मैं वंदूँ मन आनंद घना।।56।।

(15)

श्री धर्मनाथ के समवसरण में, ध्वनि खिरती नित[1] चार बार।
वह धर्मामृत बरसा करके, भव्यों को तृप्त करे अपार।।
गणधर व इंद्र चक्रेश्वर के, प्रश्नों से अन्य समय खिरती।
पूरबदिश मानस्तंभ नमूँ, जिन भक्ती सब इच्छित फलती।।57।।

जिन समवसरण में गणधर मुनि, जिनवरध्वनि का विस्तार करें।
फिर द्वादशांग में गूँथ–गूँथ, कहते मुनिगण कंठाग्र करें।।
जिनवचनामृत को पी-पीकर, द्वादशगण को शांति मिलती।
दक्षिण दिशि मानस्तंभ नमूँ, जिनभक्ती मनवांछित फलती।।58।।

जिनसमवसरण की वापी के, जल में भवि निजभव देखे हैं।
भामंडल में निज सात भवों को, देख भवों से छूटे हैं।।

1. अर्धरात्रि में भी खिरती है ऐसा किन्हीं ग्रंथों में है।

जिनवचनामृत को पी-पीकर, भव्यो को सुख शांति मिलती।
पश्चिम दिशि मानस्तंभ नमूँ, जिनभक्ती मनवांछित फलती।।59।।

जिनसमवसरण अद्भुत रचना, इन्द्राज्ञा से धनपति रचता।
वहं मानस्तंभ के दर्शन से, अभिमानी का सब मद गलता।।
जिनवर सन्निध का ही प्रभाव, अन्य मानस्तंभ में नहिं शक्ती।
उत्तर दिशि मानस्तंभ नमूँ, जिनभक्ती मन वांछित फलती।।60।।

(16)

श्री शांतिनाथ का समवसरण, भक्तों की भव-भव दाह हरे।
जिननाम मंत्र भी भव्यों को, आत्यंतिक शांति प्रदान करे।।
जो समवसरण की भक्ति करें, उनकी सब बाधाएँ टलतीं।
पूरब दिशि मानस्तंभ नमूँ, जिनभक्ती मन वांछित फलती।।61।।

जिनसमवसरण का ही प्रभाव, सौ-सौ योजन दुर्भिक्ष टले।
सब ईति भीति मारी संकट, नहिं होवे जहँ जिनराज चलें।।
सब ऋतु के भी फलफूलफलें, असमय में भी कलियाँखिलतीं।
दक्षिण दिशि मानस्तंभ नमूं, जिन भक्ती मन वांछित फलती।।62।।

जिस मारग से हो श्रीविहार[1], वहाँ बहुत दिनों तक शांति रहे।
नहिं कष्ट उपद्रव दुर्घटना, सब रोग शोक दुख शांत रहे।।
सब क्रूर मनुजगण पशुगण के भी, आपस में मैत्री बनती।
पश्चिम दिशि मानस्तंभ नमूँ, जिनभक्ती मनवांछित फलती।।63।।

जिन सन्निध में सौधर्म इन्द्र, किंकर बन जिन आज्ञा पाले।
जहँ-जहँ प्रभु का हो श्रीविहार, वह शीघ्र व्यवस्था कर डाले।।
इससे वह इक ही भव धरता, जिन भक्ती है अमोघ[2] शक्ती।
उत्तर दिशि मानस्तंभ नमूँ, जिनभक्ती मनवांछित फलती।।64।।

1. अरहंत देव का विहार। 2. हरिवशं पुराण से 3. जो कभी व्यर्थ नहीं जाती है। 4. इन्द्र।

(17)

-सखी छंद-

श्री कुंथुनाथ जिनवर का, है समवसरण अति नीका।
मानस्तंभ पूरब दिश में, वंदूँ जिनप्रतिमा नित मैं।।65।।

जिनसमवसरण अति सुन्दर, नित भक्ती करें पुरन्दर[1]।
मानस्तंभ दक्षिण दिश में, वंदूँ जिनप्रतिमा नित मैं।।66।।

जिनसमवसरण की महिमा, गणधर मुनि गाते गरिमा।
मानस्तंभ पश्चिम दिश में, वंदूँ जिनप्रतिमा नित मैं।।67।।

जिनसमवसरण अतिशायी, गुण गावें मन हरषायी।
मानस्तंभ उत्तर दिश में, वंदूँ जिनप्रतिमा नित मैं।।68।।

(18)

अरनाथ अरी को नाशा, निज केवलज्ञान प्रकाशा।
उन समवसरण पूरब में, शुभ मानस्तंभ नमूँ मैं।।69।।

जिनसमवसरण में आवो, अतिशायी पुण्य कमाओ।
वीथी में दक्षिण दिश में, शुभ मानस्तंभ नमूँ मैं।।70।।

सब जन को शरण प्रदाता, जिन समवसरण सुखदाता।
अति सुन्दर पश्चिम दिशि में, शुभ मानस्तंभ नमूँ मैं।।71।।

नहिं समवसरण में बाधा, नहिं निद्रा प्यास न क्षूधा।
अतिशयकर उत्तर दिश में, शुभ मानस्तंभ नमूँ मैं।।72।।

(19)

श्री मल्लिनाथ भवविजयी, उन समवसरण सुख प्रदयी।
पूरब दिशि मानस्तंभ में, जिनप्रतिमा वंदूँ नित मैं।।73।।

जिनसमवसरण भव अंतक, पूजक होते दुख वंचक।
दक्षिण दिश मानस्तंभ में, जिनप्रतिमा वंदूँ नित मैं।।74।।

1. इन्द्र।

उपदेश सभा जिनवर की, है गोल चतुर्मुख जिनकी।
पश्चिम दिश मानस्तंभ में, जिनप्रतिमा वंदूँ नित मैं।।75।।

जो काम-मोह-यम विजयी, वे मल्लिनाथ भवविजयी।
उत्तर दिश मानस्तंभ में, जिनप्रतिमा वंदूँ नित मैं।।76।।

(20)

मुनिसुव्रत जिनवर व्रतधर, उन समवसरण सब दुखहर।
अपूरब पूरब दिशि में, जिन मानस्तंभ नमूँ मैं।।77।।

जिनसमवसरण अभिरामा, सब भक्त लहें निजधामा।
दक्षिण दिश की वीथी में, जिन मानस्तंभ नमूँ मैं।।78।।

जिनसमवसरण की शोभा, देवों का भी मन लोभा।
पश्चिम दिश की वीथी में, जिन मानस्तंभ नमूँ मैं।।79।।

जिनसमवसरण अतिशयभृत, सब रिद्धि सिद्धि नवनिधिकृत।
उत्तर दिश की वीथी में, जिन मानस्तंभ नमूँ मैं।।80।।

(21)

-सोरठा-

नमि जिन जग परमेश, समवसरण अतिशय घना।
वंदूँ भक्ति समेत, पूरब मानस्तंभ को।।81।।

भवदधि तारन सेतु, समवसरण अतिरम्य है।
वंदूँ भक्ति समेत, दक्षिण मानस्तंभ को।।82।।

दर्शक जन सुखहेत, समवसरण जिनराज का।
वंदूँ भक्ति समेत, पश्चिम मानस्तंभ को।।83।।

सींचे भविजन खेत, जिनवच जल वर्षा करें।
वंदूँ भक्ति समेत , उत्तर मानस्तंभ को।।84।।

---

1. देखते ही।

(22)

नेमीनाथ जिनेश, समवसरण धनपति रचा।
वंदूँ भक्ति समेत, पूरब मानस्तंभ को।।85।।

सब जन आनंद हेत, राजमती आर्या वहाँ।
वंदूँ भक्ति समेत, दक्षिण मानस्तंभ को।।86।।

गणधर वंदन हेत, समवसरण शोभे अती।
वंदूँ भक्ति समेत, पश्चिम मानस्तंभ को।।87।।

सुरनर पावन हेतु, समवसरण अतिशुद्ध है।
वंदूँ भक्ति समेत, उत्तर मानस्तंभ को।।88।।

(23)

-नरेन्द्र छंद-

पार्श्वनाथ के कमठ उपद्रव, जीत घाति अरि नाशा।
पद्मावति धरणेन्द्र देव ने, सब उपसर्ग विनाशा।।
केवलज्ञान सूर्य के उगते, समवसरण क्षण भर में।
मानस्तंभ पूर्वदिश का मैं, वंदूँ रुचि धर मन में।।89।।

क्षमाशील प्रभु महामना हो, बहु उपसर्ग सहा है।
संकटमोचन अतः भव्य के, ऋषि ने यही कहा है।।
पद्मावति शासन देवी का, मान बढ़ा इस युग में।
मानस्तंभ दक्षिणी दिश का, वंदूँ रुचि धर मन में।।90।।

समवसरण की शोभा न्यारी, जगह जगह बावड़ियाँ।
लाल सफेद कमल खिलते लख, खिल जाती मन कलियाँ।।
केवलज्ञान सूर्य किरणों से, हैं प्रकाश त्रिभुवन में।
मानस्तंभ पश्चिमी दिश का, वंदूँ रुचि धर मन में।।91।।
समवसरण में लताभूमि, उपवन में फूल खिले हैं।
जातविरोधी क्रूर पशु, आपस में गले मिले हैं।।
नाम मंत्र प्रभु का जपते, अरि बने मित्र क्षण भर में।
मानस्तंभ उत्तरी दिश का, वंदूँ रुचि धर मन में।।92।।

(24)

पचीस सौ ब्यालीस[1] वर्ष के, पूर्व विपुल पर्वत पर।
महावीर का समवसरण था, बना यहाँ अति मनहर।।
भरतक्षेत्र में आज उन्हीं का, शासन इस धरती पर।
मानस्तंभ पूर्वदिश का मैं, वंदूँ अतिशय रुचिधर।।93।।

महावीर अतिवीर वीर प्रभु, वर्द्धमान जिन सन्मति।
पाँच नाम से आप प्रथित हैं, दीजे मुझको सन्मति।।
समवसरण में आप विराजें, द्वादश गण के ईश्वर।
मानस्तंभ दक्षिणी दिश का, वंदूँ अतिशय रुचिधर।।94।।

छ्यासठ दिन तक खिरी नहीं ध्वनि, तब सौधर्म सुरेश्वर।
इन्द्रभूति गौतम को लाया, वे ही हुए गणेश्वर।।
समवसरण में सब जन तर्पित, किया धर्म वर्षा कर।
मानस्तंभ पश्चिमी दिश का, वंदूँ अतिशय रुचिधर।।95।।

समवसरण की महिमा न्यारी, कह न सके शारद माँ।
लोकोत्तर सम्पत्ति वहाँ पर, लोकोत्तर ही गरिमा।।
ऐसे समवसरण का दर्शन, शीघ्र मिले यह दो वर।
मानस्तंभ उत्तरी दिश का, वंदूँ अतिशय रुचिधर।।96।।

चौबीसों तीर्थंकर जिनके, समवसरण में होते।
मानस्तंभ सु चार-चार ही, मान पंक को धोते।।
गणधर मुनिगण सुरपति नरपति, खगपति वंदन करते।
मैं वंदूँ नितप्रति रुचि से, पुण्य पूर्ण ये करते।।97।।

1. 2519 वीर निर्वाण अभी चल रहा है और महावीर स्वामी ने 30 वर्ष की उम्र में दीक्षा लेकर 12 वर्ष तपश्चरण किया था अनंतर केवलज्ञानी 30 वर्ष तक रहे थे। अतः 30 + 2519 = 2549 वर्ष पूर्व उन्हें केवलज्ञान हुआ था। जब यह प्रकरण लिखा तब वीर सं. 2519 था। अभी सन् 2014 में वीर निर्वाण 2540 चल रहा है।

मानस्तंभ महिमा

-शंभु छंद-

जय जय मानस्तंभ चउदिश के, जय जय उन सबकी जिनप्रतिमा।
जय जय मानी का मान हरे, जय सार्थक नाम धरी महिमा।।
प्रत्येक जिनेश्वर ऊँचाई से बारह गुणे कहे ऊँचे।
ये योजन बीस करें प्रकाश, बारह योजन से ही दीखें।।98।।

इनको घेरे हैं तीन कोट, जो चउ गोपुर द्वारों से युत।
इन कोट अभ्यंतर बावड़ियाँ, उद्यान देवगण से संयुत।।
इन मध्य चतुर्दिक् सोम व यम, अरु वरुण कुबेर जु लोकपाल।
इनके आवास बने सुन्दर, उनमें रमते ये पुण्यशालि।।99।।

बीचों बिच कटनी तीन कही, वैडूर्ण सुवर्ण सु रत्नमयी।
द्वय कटनी पर पूजन सु द्रव्य अठ, मंगल द्रव्य ध्वजादि सही।।
तीजी पर मानस्तंभ खड़े, ये मूल भाग में वज्रमयी।
सर्वत्र फटिक मणि के सुन्दर, ऊपर में हैं वैडूर्यमयी।।100।।

ये मूलभाग में चतुष्कोण, ऊपर तक गोल बने सुन्दर।
इनमें पहलू[1] हैं दो हजार, जिनकी है चमक बहुत मनहर।।
ऊपर में छत्र चंवर घंटा, किंकिणियाँ रत्नहार शोभें।
चारों दिश आठ सु प्रातिहार्य, अद्भुत शिखरों से अति शोभें।।101।।

चारों दिश जिनप्रतिमाएँ हैं, जिनके वंदन से पाप टरें।
क्षीरोदधि से जल ला करके, सब सुरगण मिल अभिषेक करें।।
चंदन अक्षत पुष्पादि लिये, सुर-नरगण पूजा करते हैं।
सम्यग्दृष्टी बहुभक्ति लिये, जिनगुण स्तवन उचरते हैं।।102।।

पूरब मानस्तंभ के चउदिश, नंदोत्तर नंदा नंदिमती।
नंदीघोषा बावड़ियाँ, कमलों कुमुदों से गंधवती।।
दक्षिण मानस्तंभ चउदिश में, बावड़ियाँ नीर पवित्र भरी।
विजया व वैजयंता रु जयंता, अपराजिता सुनाम धरी।।103।।

1. हरिवंशपुराण सर्ग 57 श्लोक-16।

पश्चिम मानस्तंभ चारों दिश, बावड़ी अशोका सुप्रबुद्धा।
कुमुदा व पुंडरीका फूले, कुमुदों युत नीर भरी शुद्धा।।
उत्तर मानस्तंभ के चउदिश, हृदयानन्दा सु महानंदा।
सुप्रतिबद्धा अरु प्रभंकरा, वापी जलभरीं जनानंदा।।104।।

इन सबमें मणिमय सीढ़ी हैं, द्वय बाजू दो-दो कुंड बने।
इन कुंडों में सुर-नर-पशुगण, पगधूली धोकर शुद्ध बने।।
इन सोलह वापी का वर्णन, सुरपति भी नहिं कर सकते हैं।
बहु हंस-बतख-सारस पक्षी, उनमें कलरव ध्वनि करते हैं।।105।।

जिनवर सन्निध का ही प्रभाव, जो मानस्तंभ मान हरते।
यदि सुरपति भी अन्यत्र रचे, नहिं यह प्रभाव वे पा सकते।।
है धन्य घड़ी यह धन्य दिवस, जो वंदन का सौभाग्य मिला।
वह धन्य घड़ी भी मिले शीघ्र, साक्षात् दर्श हो जाय भला।।106।।

-दोहा-

जय जय जिनवर बिंब सब, जय जय मानस्तंभ।
'ज्ञानमती' सुख संपदा, भरो हरो जगफंद।।107।।

धर्म एक सर्वश्रेष्ठ समुद्र है

चारुगुणसलिलपउरं संजमउत्तुंगउम्मिसंघायं।
णिम्मलतवपायालं समिदि महामच्छ संछण्ण।।
जमणियमदीवपउरं वरगुत्तिगंभीर सीलमज्जादं।
णिव्वाणरयणणिवहं धम्मसमुद्दं णमंसामि।।

अर्थ-सुन्दर गुणों रूप जल की प्रचुरता से संयुक्त, संयमरूप उन्नत ऊर्मि समूहों से सहित, निर्मल तपरूप पातालों से परिपूर्ण, समितियों रूपी महामत्स्यों से व्याप्त, यम-नियम रूप प्रचुर द्वीपों (जलजन्तु विशेषों) से संयुक्त, श्रेष्ठ गुप्तियों एवं गंभीर शीलरूप मर्यादा से सहित और निर्वाणरूप रत्नसमूह से सम्पन्न ऐसे धर्मरूप समुद्र को मैं नमस्कार करता हूँ।

-जम्बूद्वीपपण्णत्ति-आचार्य पद्मनंदि

प्रशस्ति

तीर्थंकर को नित नमूँ, नमूँ सरस्वति मात।
गौतमादि गणधर नमूँ, नमूँ साधु जग तात।।1।।

कुंदकुंद आम्नाय में, गच्छ सरस्वति मान्य।
बलात्कारगण ख्यात में, हुये सूरि जग मान्य।।2।।

इस युग में चूड़ामणी, शांतिसागराचार्य।
चारित चक्री धर्मधुरि, हुए प्रथम आचार्य।।3।।

इनके पट्टाधीश थे, वीरसागराचार्य।
मुझे आर्यिका व्रत दिया, नाम ज्ञानमति धार्य।।4।।

मानस्तंभ स्तोत्र यह, सुंदर रचना जान।
पढ़ो पढ़ावो भव्यगण, पावो सौख्य निधान।।5।।

जब तक श्री जिनधर्म यह, जग में करे प्रकाश।
तब तक गणिनी ज्ञानमति, कृतस्तोत्र सुखराशि।।6।।

इस जग में जिनभक्त के, मन में करे प्रमोद।
मानस्तंभ स्तोत्र यह, जग को दे आलोक।।7।।

।।इति श्रीसमवसरणमानस्तंभस्तोत्रं समाप्तं।।
(इति शं भूयात्)

महान औषधि क्या है?

जिणवयणमोसहमिणं विसहसुहविरेयणं अमिदभूदं।
जरमरणवाहिहरणं खयकरणं सव्वदुक्खाणं।।

अर्थ-जिनेन्द्रदेव के वचन महान औषधि हैं, ये विषयसुखों का विरेचन कराने वाले हैं, अमृतरूप हैं, जरा और मरणरूप महाव्याधि को दूर करने वाले हैं तथा संपूर्ण दुःखों का क्षय करने वाले हैं।

(भगवान कुंदकुंद, दर्शनप्राभृत)

समवसरण
चैत्यप्रासाद भूमि स्तोत्र

–गीता छंद–

तीर्थंकरों की सभा भूमी, धनपती रचना करें।
है समवसरण सुनाम उसका, वह अतुल वैभव धरे।।
जो घातिया को घातते, कैवल्यज्ञान विकासते।
वे इस सभा के मध्य अधर, सुगंधकुटि पर राजते।।1।।

–नरेन्द्र छंद–

चैत्य प्रासाद नाम भू पहली, धूलिसाल अभ्यंतर।
पाँच पाँच प्रासाद एक इक, जिनमंदिर के अंतर।।
तीर्थंकर ऊँचाई से ये, बारह गुणिते ऊँचे।
जिनमंदिर जिनप्रतिमाओं को, नमूँ नमूँ भक्ती से।।2।।

–नरेन्द्र छंद–

वृषभदेव के समवसरण में, चैत्य महल भू प्रथमा।
पाँच पाँच महलों के अंतर, इक इक जिनगृह सुषमा।।
जिनमंदिर जिनप्रतिमा वंदूं, मिटे सर्व दुख आपत्।
पाँच परावर्तन से छूटूँ, मिले स्वात्मसुख संपत्।।1।।

अजितनाथ के समवसरण में, प्रथम भूमि में शोभें।
चतुष्कोण वापी उपवन से, जिनगृह जन मन लोभें।।जिन.।।2।।

संभव जिनके समवसरण में, प्रथम भूमि सुर मनहर।
विविध बावड़ी वन पर्वत से, जिनगृह में भव दुखहर।।जिन.।।3।।

अभिनंदन जिन समवसरण की, शोभा अतिशय न्यारी।
विविध पुष्प से सुरभित दशदिश, फूल रही हैं क्यारी।।जिन.।।4।।

सुमतिनाथ के समवसरण में, चैत्यमहल भूमी में।
देव देवियाँ क्रीड़ा करते, जिनगुण गाते लय में।।जिन.।।5।।

पद्मप्रभू के समवसरण में, विद्याधर ललनायें।
प्रथम भूमि के जिनमंदिर में, पूजा भक्ति रचायें।।
जिनमंदिर जिनप्रतिमा वंदूं, मिटे सर्व दुख आपत्।
पाँच परावर्तन से छूटूँ, मिले स्वात्मसुख संपत्।।6।।

श्री सुपार्श्व जिन समवसरण में, सुर किन्नर किन्नरियां।
प्रथम भूमि में जिनप्रतिमा के, गुण गावें रुचि धरिया।।जिन.।।7।।

चंदा प्रभु के समवसरण में, भव्य जीवगण आते।
प्रथम भूमि के जिनमंदिर को, झुक-झुक शीश नवाते।।जिन.।।8।।

पुष्पदंत जिन समवसरण में, मानस्तंभ के आगे।
सम्यग्दृष्टि भक्ति भाव से, नृत्य करें गुण गाके।।जिन.।।9।।

शीतल जिनके समवसरण में, प्रथम भूमि जिनमंदिर।
भक्तों का मन शीतल करते, सर्व तापहर सुदंर।।जिन.।।10।।

श्री श्रेयांस के समवसरण में, नृत्य करें सुर ललना।
जिनवर सुयश उचरतीं हर पल, वच मानों सुख करना। जिन.।।11।।

वासुपूज्य जिन वासव पूजित, समवसरण सुखकारी।
प्रथम भूमि के जिनआलय की, महिमा अतिशय न्यारी।।जिन.।।12।।

–दोहा–

विमलनाथ का समवसृति, प्रथम भूमि मनहार।
जिनमंदिर जिनबिंब को, नमूं मिले सुखसार।।13।।

श्री अनंत जिनराज का, समवसरण सुखधाम।
प्रथम भूमि जिनगेह को, नमूं मिले निजधाम।।14।।

धर्मनाथ धर्मैक धुर, समवसरण निष्पाप।
प्रथम भूमि जिनगेह को, नमूं मिटे जग ताप।।15।।

शांतिनाथ जिनराज का, समवसरण अतिशायी।
प्रथम भूमि जिनगेह को, नमूं सर्व सुखदायी।।16।।

कुंथुनाथ त्रिभुवनपती, समवसरण के ईश।
प्रथम भूमि जिनगेह को, नमूं नमाकर शीश।।17।।

अरहनाथ सब भव्य हित, समवसरण के नाथ।
धर्मामृत वर्षा करें, नमूं नमाकर माथ।।18।।

मल्लिनाथ यम मोह अरु, काम मल्ल के जिष्णु।
समवसरण के जिनभवन, नमूं त्रिजग हित विष्णु।।19।।

मुनिसुव्रत मुनिनाथ पति, सबको दें उपदेश।
समवसरण के जिनभवन, नमूं मिटे भवक्लेश।।20।।

नमिजिन सब दुख शोकहर, मंगल करण जिनेश।
समवसरण के जिनभवन, नमूं न हो दुख लेश।।21।।

नेमिनाथ करुणा करें, त्रिभुवन के आधार।
समवसरण के जिनभवन, नमूं कर्म हों क्षार।।22।।

पार्श्वनाथ संकट हरण, क्षमा निधान महान।
समवसरण के जिनभवन, नमतें स्वात्म निधान।।23।।

महावीर सिद्धार्थ सुत, त्रिभुवन पिता जिनेश।
समवसरण के जिनभवन, नमूं सु भक्ति हमेश।।24।।

–नरेन्द्र छंद–

चौबीस जिन के समवसरण में, प्रथम भूमि में जिनगृह।
उनको उनमें जिन प्रतिमा को,नमतें नशें अशुभ ग्रह।।
रोग शोक दारिद्र कलह सब, बैर विरोध मिटेंगे।
भक्ति भाव से नित प्रति वंदूं, वंदत कर्म कटेंगे।।25।।

चैत्यप्रासाद भूमि महिमा

–स्रग्विणी छंद–

मैं नमूँ मैं नमूँ सर्व तीर्थेश को।
सर्व जिनबिंब युत सर्व जिनगेह को।।
नाथ मेरी सुनो एक ही प्रार्थना।
फेर होवे न संसार में आवना।।26।।

जिन समोसर्ण में सर्व मन मोहती।
चैत्य प्रासाद भू चौतरफ शोभती।।नाथ.।।27।।

चउदिशी वीथि में नाट्यशाला बनी।
दो तरफ दोय दो नृत्य से सोहनी।।नाथ.।।28।।

एक इक में बतीसों हि रंगभूमियाँ।
एक इक में बतीसों भवन देवियाँ।।नाथ.।।29।।

नृत्य करती हुई नाथ गुण गावतीं।
पुष्प अंजलि बिखेरंत मन भावतीं।।नाथ.।।30।।

एक इक जिनभवन शिखर से तुंग हैं।
उन सभी बीच सुरमहल पण पंच हैं।।नाथ.।।31।।

देवघर बावड़ी उपवनों युक्त हैं।
देव क्रीड़ा करें नाथ पद भक्त हैं।।नाथ.।।32।।

दोय दो धूप घट दो तरफ शोभते।
धूप खेवें सभी पाप मल धोवते।।नाथ.।।33।।

धन्य यह शुभ घड़ी धन्य है धन्य है।
धन्य मेरा जनम आप पद वंद्य हैं।।नाथ.।।34।।

आप पद वंदतें सर्व विपदा टलें।
सर्व इच्छित फलें ज्ञानमति श्री मिले।।नाथ.।।35।।

श्रद्धान ही सम्यक्त्व है

जं सक्कइ तं कीरइ जं च ण सक्केइ तं च सद्दहणं।
केवलिजिणेहि भणियं सद्दहमाणस्स सम्मत्तं।।

अर्थ–जिस कार्य को चारित्र या अनुष्ठान को करना शक्य है-किया जा सकता है उसे करना चाहिए और जिसको करना शक्य न हो उसका श्रद्धान करना चाहिए क्योंकि श्रद्धान करने वाले के सम्यक्त्व होता है ऐसा केवली भगवान ने कहा है।

(भगवान कुंदकुंद, दर्शनप्राभृत)

प्रशस्ति

–दोहा–

तीर्थंकर प्रभु की सभा, समवसरण अभिराम।
नमूं नमूं नित भक्ति से, पाऊं अविचल धाम।।1।।

हस्तिनागपुर क्षेत्र पर, जंबूद्वीप विख्यात।
बावन जिनगृह को नमूँ, द्वीप नंदीश्वर ख्यात।।2।।

चारित्र चक्रवर्ती गुरू, शांतिसागराचार्य।
उनके पट्टाधीश श्री, वीरसागराचार्य ।।3।।

किया आर्यिका ज्ञानमति, मेरे गुरुवर मान्य।
गणिनी मैंने भक्तिवश, रचा स्तोत्र महान।।4।।

जब तक जग में सौख्यप्रद, जिनशासन गुणवंत।
'चैत्यप्रासाद स्तोत्र' यह, तब तक दे शिवपंथ।।5।।

इति मंगलं भूयात्

।इति श्रीसमवसरणचैत्यप्रासादभूमिस्तोत्रं समाप्तं।।

जैनं जयतु शासनम्।

गृहस्थ धर्म भी मुक्ति में हेतु है

सन्तः सर्वसुरा सुरेन्द्रमहितं मुक्तेः परं कारणम्,
रत्नानां दधति त्रयं त्रिभुवनप्रद्योति काये सति।
वृत्तिस्तस्य यदन्नतः परमया भक्त्यार्पिताज्जायते,
तेषां सद्गृहमेधिनां गुणवतां धर्मो न कस्य प्रियः।।

अर्थ–जो रत्नत्रय समस्त देवेन्द्रों एवं असुरेन्द्रों से पूजित है, मुक्ति का अद्वितीय कारण है तथा तीनों लोकों को प्रकाशित करने वाला है, उसे साधुजन शरीर के स्थिर रहने पर ही धारण करते हैं। उस शरीर की स्थिति उत्कृष्ट भक्ति से दिये गये जिन सद्गृहस्थों के अन्न से रहती है उन गुणवान सद्गृहस्थों का धर्म भला किसे न प्रिय होगा? अर्थात् सभी को प्रिय होगा।

–आचार्य पद्मनन्दिदेव

समवसरण चैत्यवृक्ष स्तोत्र

–अनुष्टुप् छंदः–

तीर्थकृत्समवसृतौ, चतुर्थभूमिषु स्थिताः।
चैत्यवृक्षाश्चतुर्दिक्षु, ते मे कुर्वन्तु मंगलम्।।1।।

चैत्यवृक्षेषु चैत्यानि, चतुर्दिक्षु विभान्त्यपि।
तानि सर्वाणि बिम्बानि, कुर्वन्तु मम मंगलम्।।2।।

–दोहा–

समवसरण में शोभतीं, आठ भूमि सुरवंद्य।
उसमें चौथी भूमि में, चैत्यवृक्ष मुनिवंद्य।।3।।

इसमें चहुंदिश राजते, जिनवर बिंब प्रधान।
सब प्रतिमा सन्मुख नमूँ, मानस्तंभ महान।।4।।

–गीता छंद–

वृषभेश जिनके समवसृति में, वनधरा में पूर्वदिश।
वन है अशोक कहा वहाँ, तरु हैं कुसुम पत्रों भरित।।
उन मध्य एक अशोक तरु में, चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये, चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।1।।

वृषभेश जिनके समवसृति, दक्षिण दिशी वनभूमि में।
तरु सप्तछद शोभें बहुत, फल पुष्प पत्रों से घने।।
उन मध्य सप्तच्छद तरु में, चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये, चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।2।।

वृषभेष प्रभु के समवसृति में, पश्चिमी वनभूमि में।
चंपक तरु शोभें बहुत, सुरभित कुसुम पत्ते घने।।
उन मध्य चंपक चैत्य तरु में, चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये, चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।3।।

श्री आदिनाथ समवसरण में, उत्तरी वनभूमि में।
तरु आम्र के फल पुष्प पत्तों, युत वहाँ शोभें घने।।
उन मध्य आम्र सुचैत्यतरु में, चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये, चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।4।।

श्री अजितनाथ समवसरण में, पूर्वदिक् वनभूमि में।
तरु हैं अशोक अनेक विध, पुष्पादि से शोभें घने।।
उन मध्य चैत्य अशोक तरु में, चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये, चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।5।।

सब भव्यजन का शरण, जो इस दक्षिणी वनभूमि में।
तरु सप्तछद शोभें विविध, फल पुष्प पत्रों युत घने।।
उन मध्य सप्तच्छद तरु में, चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये, चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।6।।

सब भक्तजन को दे शरण, उस पश्चिमी वनभूमि में।
चंपक तरु शोभे बहुत विध, पुष्प पत्रों से घने।।
उन मध्य चंपक चैत्यतरु में, चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये, चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।7।।

धनपति रचित इस समवसृति में, उत्तरी वन भूमि में।
तरु आम्र के शोभें विविध, फल पुष्प पत्रों से घने।।
उन मध्य आम्र सुचैत्य तरु में, चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये, चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।8।।

संभव जिनेश्वर समवसृति में, वन धरा में पूर्व दिक्।
तरु वर अशोक विभासते, पुष्पादि से सौगंध युत।।
उन मध्य चैत्य अशोक तरु में, चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये, चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।9।।

गणधरगणों युत समवसृति में, दक्षिणी वन भूमि में।
तरु सप्तच्छद शोभें विविध, पुष्पादि से फूले घने।।

उन मध्य सप्तच्छद तरु में, चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये, चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।10।।

मुनिगण सहित जिन समवसृति में पश्चिमी वनभूमि में।
चंपक तरु शोभें विविध, पुष्पों सहित सुरभित घने।।
उन मध्य चंपक चैत्य तरु में, चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये, चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।11।।

द्वादशगणों युत समवसृति में, उत्तरी वनभूमि में।
बहु आम्र तरु शोभें विविध, फल पुष्प पत्रों युत घने।।
उन मध्य आम्र सुचैत्यतरु में, चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये, चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।12।।

जिननाथ अभिनंदन समवसृति, पूर्वदिक् वनभूमि में।
तरुवर अशोक विभासते, बहु पुष्प पत्रों से घने।।
उन मध्य चैत्य अशोकतरु में, चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये, चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।13।।

जिनवर समवसृति सौख्यकर, दिश दक्षिणी वनभूमि में।
तरु सप्तछद शोभें वहाँ, बहु पुष्प पत्रों से घने।।
उन मध्य सप्तच्छद तरु में, चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये, चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।14।।

जिनराजपरिषद सर्वहितकर, पश्चिमी वनभूमि में।
चंपक तरु शोभे विविध, कुसुमादि से सुरभित घने।।
उन मध्य चंपक चैत्य तरु में, चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये, चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।15।।

जिनवर समवसृति सिद्धिप्रद की, उत्तरी वनभूमि में।
तरु आम्र के शोभें बहुत विध, पुष्प फल से युत घने।।
उन मध्य आम्र सुचैत्य तरु में, चार दिश जिनमूर्तियाँ।
जैवंत होवें नित्य ये, चिंतामणी जिनमूर्तियाँ।।16।।

–नरेन्द्र छंद–

सुमतिनाथ के समवसरण में, पूरब वन भूमी में।
तरु अशोक के वृक्ष घनेरे, शोक हरें पलपल में।।
उनके बीच अशोक चैत्यतरु में, चहुंदिश जिन प्रतिमायें।
प्रातिहार्य मानस्तंभों युत, उनको शीश नमायें।।17।।

जिनवर समवसरण में दक्षिण, दिश उपवन भूमी में।
सप्तच्छद के वृक्ष घनेरे, पुष्प सुगंधित उनमें।।
उनके बीच सप्तच्छद तरु, चउदिश जिन प्रतिमायें।
प्रातिहार्य मानस्तंभों युत, उनको शीश नमायें।।18।।

सब मंगलकर समवसरण में, पश्चिम वनभूमी में।
चंपक तरु हैं नित पुष्पों से, सुरभि करें दशदिश में।।
उनके बीच वृक्ष चंपक में, चहुंदिश जिन प्रतिमायें।
प्रातिहार्य मानस्तंभों युत, उनको शीश नमायें।।29।।

लोकोत्तम जिन समवसरण में, उत्तर वनभूमी में।
आम्रवृक्ष हैं फल पुष्पों युत, सुरनर रमते उनमें।।
उनके बीच आम्रतरु इनमें, चहुंदिश जिन प्रतिमायें।
प्रातिहार्य मानस्तंभों युत, उनको शीश नमायें।।20।।

पद्मप्रभू के समवसरण में, पूरब दिश उपवन में।
तरु अशोक सब पवन झकोरे, हिलते हैं क्षण क्षण में।।
उनके बीच अशोक चैत्य तरु, उसमें चहुंदिश प्रतिमा।
उनको वंदूं सर्व सौख्यप्रद, लोकोत्तर जिन महिमा।।21।।

जिनवर समवसरण सुखदाता, दक्षिण दिश उपवन में।
वृक्ष सप्तछद पृथिवीकायिक, पुष्प पत्र हैं उनमें।।
उनके बीच चैत्यतरु सुंदर, उसमें चहुंदिश प्रतिमा।
उनको वंदूं सर्व सौख्यप्रद, लोकोत्तर जिन महिमा।।22।।

समवसरण जन शरणभूत है, उसमें पश्चिम वन में।
चंपक वृक्ष सुगंधित सुंदर, सुरगण रमते उनमें।।
उनके बीच चैत्यतरु चंपक, उसमें चहुंदिश प्रतिमा।
उनको वंदूं सर्व सौख्यप्रद, लोकोत्तर जिन महिमा।।23।।

समवसरण में उपवन भूमि, उत्तर दिश में सोहें।
आम्रवृक्ष फल पुष्पों से युत, सुरकिन्नर मन मोहें।।
उनके बीच आम्र चैत्यतरु, उसमें चहुंदिश प्रतिमा।
उनको वंदूं सर्व सौख्यप्रद, लोकोत्तर जिन महिमा।।24।।
श्री सुपार्श्व जिनसमवसरण में, पूरबदिश उपवन में।
तरु अशोक हैं मणिमय पत्ते, पुष्प लगे हैं उनमें।।
उनके बीच वृक्ष इक सुंदर, उसमें चहुंदिश प्रतिमा।
उनको वंदूं सर्व सौख्यप्रद, लोकोत्तर जिन महिमा।।25।।

समवसरण त्रिभुवन हितकारी, उसमें दक्षिण वन में।
वृक्ष सप्तछद मरकतमणिमय, पत्तों से युत उनमें।।
उनके बीच चैत्यतरु सुंदर, उसमें चहुंदिश प्रतिमा।
उनको वंदूं सर्व सौख्यप्रद, लोकोत्तर जिन महिमा।।26।।

समवसरण सब रोग शोकहर, उसमें पश्चिम वन में।
चंपक वृक्ष रत्नमणि निर्मित, उन सुगंध दश दिश में।।
उनके बीच चैत्यतरु सुंदर, उसमें चहुंदिश प्रतिमा।
उनको वंदूं सर्व सौख्यप्रद, लोकोत्तर जिन महिमा।।27।।

समवसरण सब वैर कलह हर, उसमें उत्तर वन में।
आम्र वृक्ष सब कुबेर निर्मित, फल फूलोंयुत उनमें।।
उनके बीच चैत्यतरु सुंदर, उसमें चहुंदिश प्रतिमा।
उनको वंदूं सर्व सौख्यप्रद, लोकोत्तर जिन महिमा।।28।।

चन्द्रप्रभू के समवसरण में, पूरब दिश उपवन में।
तरु अशोक उद्यान कुसुम युत, शोक हरे हर पल में।।
उनके बीच चैत्यतरु सुंदर, उसमें चहुंदिश प्रतिमा।
उनको वंदूं सर्व सौख्यप्रद, लोकोत्तर जिन महिमा।।29।।

जिनवर समवसरण श्रेयस्कर, उसमें दक्षिण वन में।
वृक्ष सप्तछद विविध रत्नमय, पत्र पुष्प हैं उनमें।।
उनके बीच चैत्यतरु सुंदर, उसमें चहुंदिश प्रतिमा।
उनको वंदूं सर्व सौख्यप्रद, लोकोत्तर जिन महिमा।।30।।

समवसरण है विश्वहितंकर, उसमें पश्चिम वन में।
चंपक तरु उद्यान मनोहर, खिले कुसुम उन सबमें।।
उनके बीच चैत्यतरु सुंदर, उसमें चहुंदिश प्रतिमा।
उनको वंदूं सर्व सौख्यप्रद, लोकोत्तर जिन महिमा।।31।।

समवसरण सब भव्य हितंकर, उसमें उत्तर वन में।
आम्रवृक्ष फल पुष्प भारयुत, सुरभि करें दशदिश में।।
उनके बीच चैत्यतरु सुंदर, उसमें चहुंदिश प्रतिमा।
उनको वंदूं सर्व सौख्यप्रद, लोकोत्तर जिन महिमा।।32।।

–अडिल्ल छंद–

पुष्पदंत के समवसरण में वन मही[1]।
पूरबदिश में तरु अशोक वन सोभहीं।।
उसके मध्य अशोक चैत्यतरु शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब नमूं मन मोहता।।33।।

समवसरण जिनवर का नवनिधि से भरा।
उसमें दक्षिण दिश सप्तच्छद वन धरा[2]।।
उसके बीच सप्तछद तरु इक शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब नमूं मन मोहता।।34।।

पुष्पदंत जिन अधर राजते गगन में।
समवसरण में चंपक वन दिश अपर में।।
उसके बीच चैत्य चंपकतरु शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब नमूं मन मोहता।।35।।

1. भूमि। 2. भूमि।

पुष्पदंत की दिव्यधुनी मुनिगण सुनें।
उत्तरदिश में आम्र वनी में तरु घने।।
उसके बीच आम्र चैत्यतरु शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब नमूं मन मोहता।।36।।

शीतल जिनका समवसरण शीतल करे।
उसमें पूरब दिश अशोक वन मन हरे।।
उसके मध्य अशोक वृक्षवन शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब नमूं मन मोहता।।37।।

समवसरण में चैत्यवृक्ष को मुनि नमें।
दक्षिण में सप्तच्छद वन में सुर रमें।।
उसके मध्य सप्तछद तरु इक शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब नमूं मन मोहता।।38।।

चैत्यवृक्ष जिनप्रतिमा गणधर वंद्य हैं।
पश्चिमदिश में चंपक वन अभिनंद्य है।।
उसके मध्य चैत्य चंपकतरु शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब नमूं मन मोहता।।39।।

सुरनर पूजें चैत्यवृक्ष जिनबिंब को।
उत्तर वन में चैत्य आम्रतरु बिंब को।।
यह वन मणिमय प्रतिमा से अति शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब नमूं मन मोहता।।40।।

श्री श्रेयांसजिनसमवसरण अतिशय भरा।
त्रिभुवन जन क्षेमंकर पूरब वन धरा।।
उसके मध्य अशोक चैत्यतरु शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब नमूं मन मोहता।।41।।

जिनवर समवसरण में सुरपति भक्त हैं।
दक्षिण दिश सप्तच्छद वन अतिरम्य है।।

उसके मध्य सप्तछद चैत्य तरु शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब नमूं मन मोहता।।42।।

जिनवर समवसरण सौ इंद्रों वंद्य है।
पश्चिम दिश में चंपक वन अभिनंद्य है।।
उसके बीच चैत्य चंपक तरु शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब नमूं मन मोहता।।43।।

समवसरण में रोग शोक पीड़ा नहीं।
उत्तर दिश में सुन्दर आम्रतरु मही।।
उसके बीचों आम्र चैत्यतरु शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब नमूं मन मोहता।।44।।

वासुपूज्य जिन समवसरण में राजते।
वहाँ पूर्ववन में अशोक तरु लसें।।
उसके मध्य अशोक चैत्यतरु शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब नमूं मन मोहता।।45।।

समवसरण में भूख प्यास बाधा नहीं।
दक्षिण दिश में सप्तच्छद वन की मही।।
उसके मध्य सप्तछद तरुवर शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब नमूं मन मोहता।।46।।

समवसरण में अपमृत्यू भय दुख नहीं।
पश्चिमदिश चंपक वन अतिशय शोभहीं।।
उसके बीच चैत्य चंपकतरु शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब नमूं मन मोहता।।47।।

समवसरण में सम्यग्दृष्टि जा सकें।
उत्तरवन के जिन बिंबों को भज सकें।।
उसके बीच आम्रचैत्यतरु शोभता।
चहुँदिश जिनवर बिंब नमूं मन मोहता।।48।।

–चौबोल छंद–

विमलनाथ के समवसरण में, भविजन निजको शुद्ध करें।
उपवन भूमी के चारों दिश, जिनप्रतिमा की भक्ति करें।।
पूरबदिश अशोक तरु उपवन, चैत्यवृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को,वंदत सुख संपत्ति बढ़े।।49।।

समवसरण में गणधर मुनिगण, सुरनर पशुगण भक्ति करें।
स्वपर भेद विज्ञान प्राप्त कर, चतुर्गती के दुःख हरें।।
दक्षिणदिश सप्तच्छद तरुवन, चैत्य वृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को, वंदत सुख संपत्ति बढ़े।।50।।

जिनवर समवसरण में आलस निद्रा तंद्रा कष्ट नहीं।
रोग शोक दुख संकट मृत्यु वैर कलह विद्वेष नहीं।।
पश्चिमदिश चंपक तरु उपवन, चैत्यवृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को,वंदत सुख संपत्ति बढ़े।।51।।

समवसरण में जिनवर अतिशय, क्रूर पशु गण शांत बने।
सभी वैर विद्वेष छोड़कर, करें परस्पर प्रेम घने।।
उत्तर दिशी आम्रतरु उपवन, चैत्यवृक्ष सुर वंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को,वंदत सुख संपत्ति बढ़े।।52।।

प्रभु अनंतजिन अंतक भयहर, गुण अनंत के स्वामी हैं।
समवसरण में अधर विराजें, त्रिभुवन अंतर्यामी हैं।।
पूरब दिश अशोकतरु उपवन, चैत्यवृक्ष सुर वंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को,वंदत सुख संपत्ति बढ़े।।53।।

जिनवर समवसरण सुरनिर्मित, नवनिधि सुख संपत्ति भरें।
जो जन पूजें भक्तिभाव से, सर्व अमंगल दोष हरें।।
दक्षिण दिश सप्तच्छद उपवन, चैत्यवृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को,वंदत सुख संपत्ति बढ़े।।54।।

धनकुबेर ने सब संपत्ती, समवसरण में लाय धरी।
भव्यजनों के सर्वमनोरथ, तभी भक्ति ने पूर्ण करी।।
पश्चिमदिश चंपकतरु उपवन, चैत्यवृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को,वंदत सुख संपत्ति बढ़े।।55।।

बारह सभा बनी हैं उनमें, मुनिगण सुरनर पशु बैठे।
जिनवर दिव्यध्वनी सुन करके, चतुर्गती के दुःख मेटे।।
उत्तरदिश में आम्र वृक्षवन, चैत्यवृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को, वंदत सुख संपत्ति बढ़े।।56।।

धर्मनाथ के समवसरण में धर्मामृत नित बरस रहा।
मुनी आर्यिका श्रावक और श्राविका रुचि से पियें अहा।।
पूरबदिश अशोक तरु उपवन, चैत्यवृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को, वंदत सुख संपत्ति बढ़े।।57।।

समवसरण यह असंख्य भवि को, धर्मसुधा से तृप्त करे।
भवअनंत के अगणित दुख को इक क्षण में ही नष्ट करे।।
दक्षिणदिश सप्तच्छद उपवन, चैत्यवृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को,वंदत सुख संपत्ति बढ़े।।58।।

जिनवर समवसरण को वंदत, सप्त परमस्थान मिले।
भक्ती में रत भव्यजनों के, मन की कलियाँ शीघ्र खिलें।।
पश्चिमदिश चंपक तरु उपवन, चैत्यवृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को, वंदत सुख संपत्ति बढ़े।।59।।

जिनवर वंदत इन्द्र संपदा, चक्रवर्ति साम्राज्य मिले।
अधिक और क्या जिनगुणसंपद, मुक्तिरमा सहशीघ्र मिले।।
उत्तरदिश में आम्र तरुवन, चैत्यवृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को,वंदत सुख संपत्ति बढ़े।।60।।

शांतिनाथ के समवसरण में, इन्द्रराज भी भक्त बनें।
भक्तपूर्ण शांती को पाकर, जन्म मृत्यु का कष्ट हनें।।

पूरब दिश अशोक तरु उपवन, चैत्यवृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को,वंदत सुख संपत्ति बढ़े।।61।।

समवसरण में सुरललनायें, भक्तिभाव से नृत्य करें।
धवल चंद्रकिरणों सम उज्ज्वल, प्रभु की गुण कीर्ती उचरें।।
दक्षिण दिश सप्तच्छद उपवन, चैत्यवृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को,वंदत सुख संपत्ति बढ़े।।62।।

समवसरण में शारीरिक, मानस आगंतुक कष्ट नहीं।
षट्ऋतु के फल फूल वहाँ, इक साथ फलें फूलें नित ही।।
पश्चिम दिश में चंपक तरु वन, चैत्यवृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को,वंदत सुख संपत्ति बढ़े।।63।।

समवसरण में जिनप्रभाव से, वैर कलह संघर्ष नहीं।
सिंह हिरण अरु सर्प नेवला प्रेम परस्पर करें सही।।
उत्तर दिश उद्यान आम्र का, चैत्यवृक्ष सुरवंद्य खड़े।
उनकी चहुँदिश जिनप्रतिमा को,वंदत सुख संपत्ति बढ़े।।64।।

–सखी छंद–

श्री कुंथुनाथ जिनदेवा, तुम समवसरण दुख छेवा।
उपवन अशोक पूरब में, नमूं चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।65।।

जिन समवसरण के अंदर, सौधर्म इन्द्र प्रभु किंकर।
वन सप्तच्छद दक्षिण में, नमूं चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।66।।

मुनिनाथ प्रभू गुण भजते, सुर किन्नर पूजा रचते।
चंपक वन पश्चिम दिश में, नमूं चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।67।।

गणधर तुम गुण को गाते, निज में परमानंद पाते।
वन आम्र तरु उत्तर में, नमूं चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।68।।

जिन अरहनाथ मुनिनाथा, इन्द्रादि नमाते माथा।
उन समवसरण पूरब में, नमूं चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।69।।

जिनसमवसरण अतिशायी, त्रिभुवनजन को सुखदायी।
सप्तच्छद वन दक्षिण में, नमूं चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।70।।
जिनवर सन्निध पा करके, भविजन भव भव दुख हरते।
चंपक वन पश्चिम दिश में, नमूं चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।71।।
चहुँदिश प्रतिमा के सन्मुख, हैं मानस्तंभ चतुर्मुख।
आमों का वन उत्तर में, नमूं चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।72।।
जिनमल्लिनाथ भव विजयी, उन समवसरण सुखकरई।
उपवन अशोक पूरब में, नमूं चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।73।।
निजपरमानंद सुखदाता, जो भजे सर्व सुख पाता।
सप्तच्छदवन दक्षिण में, नमूं चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।74।।
जिन आतम रस सुख पायो, उन समवसरण शिर नायो।
चंपक तरुवन पश्चिम में, नमूं चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।75।।
जिन समवसरण जो यजते, उन सर्व मनोरथ फलते।
आमों का वन उत्तर में, नमूं चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।76।।
मुनिसुव्रत जिन भवहर्ता, उन पूजत सब सुख भर्ता।
उपवन अशोक पूरब में, नमूं चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।77।।
जिन समवसरण की पूजा, इस सम नहिं हितकर दूजा।
सप्तच्छद वन दक्षिण में, नमूं चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।78।।
सब आधि व्याधि परिहारे, जिन समवसरण गुणधारे।
चंपक वन पश्चिम दिश में, नमूं चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।79।।
जो समवसरण मन धारें, वे दुख दारिद सब टारें।
आमों का वन उत्तर में, नमूं चैत्यवृक्ष रुचिधर मैं।।80।।

–दोहा–

समवसरण नमिनाथ का, सब सुख का भंडार।
वन अशोक पूरब दिशी, नमूं चैत्यतरु सार।।81।।

दस धर्मों का कल्पतरु, समवसरण सुखकार।
सप्तच्छदवन दक्षिणी, नमूं चैत्यतरु सार।।82।।
जिनवर की अद्भुत सभा, भविजन सुख दातार।
चंपक वन पश्चिम दिशी, नमूं चैत्यतरु सार।।83।।
जन्म जन्म के पाप सब, नाशूँ जिन गुणधार।
आम्रवनी उत्तर दिशी, नमूं चैत्यतरु सार।।84।।
नेमिनाथ की भक्ति से, मिले स्वात्म साम्राज।
तरु अशोक वन पूर्वदिश, नमूं चैत्यतरु आज।।85।।
समवसरण जिनराज का, त्रिभुवन सुख साम्राज।
दक्षिणदिश वन सप्तछद, नमूं चैत्यतरु आज।।86।।
जिनभक्ति से इंद्र पद, मिले चक्रि साम्राज्य।
चंपक वन पश्चिम दिशी, नमूं चैत्यतरु आज।।87।।
जिनभक्ति से ही मिले, मुक्तिपुरी का राज।
उत्तर दिश में आम्रवन, नमूं चैत्यतरु आज।।88।।
समवसरण प्रभु पार्श्व का, सब मंगल करतार।
तरु अशोकवन पूर्वदिश, नमूं चैत्यतरु सार।।89।।
सर्व अमंगल दोषहर, धर्मतीर्थ करतार।
दक्षिण दिश वन सप्तछद, नमूं चैत्यतरु सार।।90।।
नाम मंत्र जिन पार्श्व का, सर्व सौख्य दातार।
चंपक वन पश्चिमदिशी, नमूं चैत्यतरु सार।।91।।
संकट मोचन पार्श्वप्रभु, कलियुग दुख हरतार।
उत्तर दिश में आम्रवन, नमूं चैत्यतरु सार।।92।।
समवसरण जिन वीर का, अतिशय गुण भंडार।
नमूं अशोक तरु बिंब को, सर्व सौख्य भंडार।।93।।

जिन सन्मति दें सन्मती, कुमति विनाशनहार।
नमूं सप्तछद बिंब को, सर्व सौख्य भंडार।।94।।

वर्द्धमान भगवान का, समवसरण सुखकार।
चंपक तरु प्रतिमा नमूं, सर्व सौख्य भंडार।।95।।

वीर प्रभू का नाम है, स्वातम निधि दातार।
आम्र वृक्ष प्रतिमा नमूं, सर्व सौख्य भंडार।।96।।

–शंभु छंद–

चौबिस जिनवर के समवसरण में, चौथी उपवन भू मानी है।
चारों दिश इक इक चैत्य वृक्ष, चहुँदिश जिनप्रतिमा मानी हैं।।
चारों दिश की जिन प्रतिमा के, सन्मुख में मानस्तंभ खड़े।
मैं वंदूं शीश नमा करके, दिन पर दिन सुख सौभाग्य बढ़े।।97।।

(चैत्यवृक्ष महिमा)

-दोहा–

नासा दृष्टी सौम्य छवि, जिनवर सम जिनबिंब।
नमूँ नमूँ मस्तक नमाँ, पाऊँ सौख्य अनिंद्य।।98।।

–शंभु छंद–

जय जय श्री जिनवर समवसरण, जयजय चौथी उपवन भूमी।
जय जय मणिमय जिन चैत्यवृक्ष, जय जय सुर नर वंदित भूमी।।
जय जय गणधर गुरु से वंदित, जयजय मुनिगण विहरण भूमी।
जय जय अशोक सप्तच्छद अरु, चंपक व आम्रवन की भूमी।।99।।

परकोटा दूजा स्वर्णमयी, चउ गोपुर द्वारों से युत है।
व्यंतर सुर मुद्गर लेकर के, जिनभक्त वहाँ पर रक्षक हैं।।
तोरण द्वारों के उभय तरफ, अठ विध के मंगल द्रव्य धरे।
प्रत्येक एक सौ आठ कहे, ये सर्व अमंगल दोष हरें।।100।।

उसके आगे वेष्टित करके, उपवन भूमी अति शोभ रही।
दिशक्रम से अशोक सप्तच्छद, चंपक व आम्रवन दिखें वहीं।।

चारों दिश इक इक चैत्य वृक्ष, प्रभु से बाहर गुणिते ऊँचे।
प्रत्येक चैत्यतरु में चारों, दिश इक-इक जिन प्रतिमा दीखें।।101।।

ये आठ प्रातिहार्यों संयुत, मणिमय श्रीजिन प्रतिमायें हैं।
हर प्रतिमाओं के सन्मुख इक, इक मानस्तंभ कहायें हैं।।
ये तीन कोट से परिवेष्टित त्रय कटनी के ऊपर शोभें।
मानस्तंभों के चारों दिश इक इक जिन प्रतिमायें शोभें।।102।।

चौबिस जिनवर के उपवन में, छ्यानवे चैत्यतरु माने हैं।
उनमें त्रय शतक सुचौरासी, मणिमय जिनबिंब बखाने हैं।।
इनके मानस्तंभ तीन शतक चौरासी ही हो जाते हैं।
चारों दिश जिनवर बिंब सभी पंद्रह सौ छत्तिस गाते हैं।।103।।

इन जिनबिंबों को भक्ती से, जो नितप्रति वंदन करते हैं।
वे सर्व मनोरथ पूर्ण करें, क्रम से शिव लक्ष्मी वरते हैं।।
इन उपवन में कहिं बावड़ियाँ, कहिं क्रीड़ा पर्वत दिखते हैं।
कहिं भवन बने सुंदर ऊँचे, इनमें सुर नर नित रमते हैं।।104।।

पूरबदिशवन में बावड़ियाँ[1], नन्दा नन्दोत्तर आनंदा।
नन्दवती व अभिनन्दिनी, नन्दिघोषा जलभरी महानंदा।।
जो जन इनकी पूजा करते, वे उदय सुफल को पाते हैं।
वापी से पुष्पों को लेकर, जिनबिंब पूजते जाते हैं।।105।।

दक्षिणदिश विजय तथा अभिजय, जैत्री व वैजयन्ती वापी।
अपराजित जयोत्तरा नामा, ये यजत विजय फल को देतीं।।
पश्चिमदिश कुमुदा नलिनी अरु, पद्मा पुष्करा वापियाँ हैं।
विश्वोत्पला, कमला ये छह, यजते प्रीति फल देती हैं।।106।।

उत्तर में प्रभासा भासवती भासा, सुप्रभा भरीं जल से।
पुन भानुमालिनी स्वयंप्रभा, ख्याती फल देतीं पूजन से।।
वापी जल से स्नान किये, भवि जन इक भव को देखे हैं।
उस जल अवलोकन से निज के ही सात भवों को देखे हैं।।107।।

इन उदय और प्रीती फलदा, बावड़ियों के मधि मारग के।
द्वय तरफी तीन तीन खन की, बत्तीस नाट्यशाला दीखें।।
प्रत्येक में बत्तिस बत्तिस, ज्योतिषि, देवी नर्तन करती हैं।
वे हाव भाव से तन्मय हो, जिनवर गुण कीर्तन करती हैं।।108।।

हम नित्य नमें जिन प्रतिमा को सारे कलिमल धुल जावेंगे।
निज आत्म सुधारस पीकर के, निजमें ही तृप्ती पावेंगे।।
सब आधि व्याधि पीड़ा संकट, इक क्षण में ही नश जावेंगे।
निज 'ज्ञानमती' केवल करके, सिद्धालय में बस जावेंगे।।109।।

प्रशस्ति

–शंभु छंद–

श्री शांति कुंथु अरनाथ प्रभू ने, जन्म लिया इस धरती पर।
यह हस्तिनागपुरि इंद्रवंद्य, रत्नों की वृष्टि हुई यहाँ पर।।
यहाँ जम्बूद्वीप बना सुंदर, जिनमंदिर हैं अनेक सुखप्रद।
मेरा यहाँ वर्षायोग काल, स्वाध्याय ध्यान से है सार्थक।।1।।

इस युग के चारित्र चक्री श्री, आचार्य शांतिसागर गुरुवर।
बीसवीं सदी के प्रथमसूरि, इन पट्टाचार्य वीरसागर।।
ये दीक्षा गुरुवर मेरे हैं, मुझ नाम रखा था 'ज्ञानमती'।
इनके प्रसाद से ग्रंथों की, रचना कर हुई अन्वर्थमती।।2।।

यह चैत्यवृक्ष स्तोत्र मान्य, जिनप्रतिमा वंदन भक्तीवश।
यह रोग शोक दारिद्र्य दुःख, संकट हरने वाला संतत।।
जब तक चौबीसों तीर्थंकर, जग में उनका गुणगान रहे।
तब तक यह गणिनी ज्ञानमती, विरचित स्तोत्र जयशील रहे।।3।।

।इति श्रीसमवसरणचैत्यवृक्षस्तोत्रं समाप्तं।।

जैनं जयतु शासनम्।

समवसरण सिद्धार्थ वृक्ष स्तोत्र

–अनुष्टुप् छंद–

चतुर्विंशतितीर्थेशाः, धर्मचक्राधिपा अमी।
सर्वाननन्तशो नौमि, ते मे कुर्वन्तु मंगलम्।।1।।

सिद्धाः सिद्धिविधातारः, तांस्तद् बिंबानि च स्तुवे।
ते सर्वे तानि सर्वाणि, कुर्वन्तु मम मंगलम्।।2।।

सिद्धार्थतरवः सर्वे, सिद्धार्चास्तेषु याः स्थिताः।
ते सर्वे प्रतिमाश्चापि, कुर्वन्तु मम मंगलम्।।3।।

–नरेन्द्र छंद–

समवसरण में छठी भूमि है, कल्पवृक्ष की सुंदर।
चारों दिश में एक-एक, सिद्धार्थ वृक्ष हैं मनहर।।
इनमें चारों दिश इक इक हैं, सिद्धों की प्रतिमायें।
हम वंदे नित शीश नमा कर, इच्छित फल पा जायें।।4।।

चाल–हे दीनबंधु–

श्री आदिनाथ का समोसरण विशाल हैं।
ध्वजभू को वेढ़ रजतमयी तृतिय साल[1] है।।
सिद्धार्थ नमेरू तरू है कल्पभूमि में।
वंदूं सदा चउसिद्ध की प्रतिमा प्रसिद्ध मैं।।1।।
दक्षिण सुकल्प भूमि में मंदार तरु है।
उस मूल में चतुर्दिशा में सिद्धबिंब हैं।।
प्रत्येक बिंब के समक्ष मानथंभ हैं।
वंदूं सदा चउसिद्ध की प्रतिमा अनिंद हैं।।2।।

पश्चिम सुकल्पभूमि में संतानकांघ्रिपा[1]।
सिद्धार्थ वृक्ष है इसी के चार हों दिशा।।

1. परकोटा।

एकेक सिद्धबिंब साधु वृंद वंद्य हैं।
वंदूं सदा इन्हें ये चक्रवर्ति वंद्य हैं।।3।।

उत्तर सुकल्प भू में पारिजात वृक्ष है।
ये सिद्ध की प्रतिमाओं से सिद्धार्थ सार्थ है।।
जो इनको जजें उनके सर्वकार्य सिद्ध हैं।
वंदूं सदा चउसिद्ध की प्रतिमा अनिंद हैं।।4।।

तीर्थेश अजितनाथ की समवसरण कथा।
भू कल्पतरु पूर्व में नमेरु वृक्ष था।।
सिद्धार्थ नाम इसमें चार सिद्धबिंब हैं।
वंदूं सदा ये सिद्धबिंब इंद्र वंद्य हैं।।5।।

जिनराज समोसरण में जो कल्पवृक्ष हैं।
दक्षिणदिशी मंदार नाम सिद्ध[2] अर्थ है।।
उस मूल में चतुर्दिशा में सिद्धबिंब हैं।
वंदूं सदा इन्हें ये तीन लोक वंद्य हैं।।6।।

संतानकाख्य नाम के सिद्धार्थ वृक्ष में।
चारों दिशा में सिद्ध की प्रतिमा नमूँ उन्हें।।
जो वंदते जिनराज समोसर्ण को सदा।
वे स्वर्ग सौख्य भोग के शिव पावें शर्मदा।।7।।

जो पारिजात नाम के सिद्धार्थ वृक्ष को।
नित वंदते हैं भक्ति से उन सिद्धबिंब को।।
वे गणपती सुरेंन्द्र चक्रवर्ती वंद्य भी।
अतिशय अनंत सौख्य धाम प्राप्त करें ही।।8।।

संभव जिनेश समोसर्ण में विराजते।
दशविध के कल्पवृक्ष वहाँ पे हि राजते।।

1. संतानक नाम का वृक्ष। 2. सिद्धार्थ वृक्ष।

पूरबदिशी नमेरू सिद्धार्थ वृक्ष है।
वंदूं उन्हें चउदिश के जो सिद्धबिंब हैं।।9।।

जो भी मनुष्य कल्पवृक्ष के निकट आते।
जो कुछ भी माँगते वो क्षणमात्र में पाते।।
दक्षिण में जो मंदार ही सिद्धार्थ वृक्ष हैं।
वंदूं वहाँ चउदिश के जो सिद्धबिंब हैं।।10।।

इस कल्पभूमि में कहिं पे बावड़ी बनी।
लघु पर्वतों पे देवियां क्रीड़ा करें घनी।।
पश्चिम दिशी संतानक सिद्धार्थ वृक्ष है।
वंदूं वहाँ चउदिश के जो सिद्धबिंब हैं।।11।।

उत्तर में पारिजात जो सिद्धार्थ वृक्ष है।
उस मूल में चउदिश में सिद्ध बिंब रम्य हैं।।
प्रतिमा समक्ष मानस्तंभ जगत वंद्य हैं।
वंदूं वहाँ चउदिश के जो सिद्धबिंब हैं।।12।।

अभिनंदनेश समोसर्ण में विराजते।
उसमें छठी धरा में कल्पवृक्ष राजते।।
पूरबदिशी नमेरू सिद्धार्थ वृक्ष है।
वंदूं वहाँ चउदिश के जो सिद्धबिंब हैं।।13।।

दक्षिणदिशी कहा है मंदार वृक्ष जो।
उसके चतुर्दिशा में चउ सिद्ध बिंब जो।।
सुरपति व चक्रवर्ती नरपति से वंद्य हैं।
वंदूं वहाँ चउदिश भी जो मानस्तंभ हैं।।14।।

पश्चिम दिशी संतानक सिद्धार्थ वृक्ष है।
उसके चतुर्दिशा में चउ सिद्धबिंब हैं।।
निज साम्य सुधारस के स्वादी मुनी वहां।
वंदन करें सतत ही हम वंदते यहाँ।।15।।

उत्तर में पारिजात जो सिद्धार्थ वृक्ष है।
मुनिगण से वंद्य नित्य ही सुरगण से पूज्य है।।
इसके चतुर्दिशा में चउ सिद्धबिंब हैं।
हम वंदते इन्हें ये सर्वार्थसिद्धि हैं।।16।।

–रोला छंद–

सुमतिनाथ जिनराज, समवसरण में राजें।
छठी कल्पतरु भूमि, कल्पवृक्ष से साजें।।
पूरब दिश सिद्धार्थ, वृक्ष नमेरु मानों।
सिद्धबिंब हैं चार, पूजत भव दुख हानों।।17।।

जो भवि वंदें नित्य, सिद्धों की प्रतिमायें।
समवसरण में जांय, अतिशय पुण्य कमायें।।
दक्षिण दिश मंदार, तरु सिद्धार्थ बखानों।
सिद्धबिंब हैं चार, वंदत भव दुख हानों।।18।।

साधु मुमुक्षू नित्य, स्वात्मसुधारस पीते।
सिद्धबिंब को ध्याय, कर्म अरी को जीतें।।
पश्चिमदिश सिद्धार्थ, संतानक तरु जानो।
सिद्धबिंब हैं चार, वंदत भव दुख हानों।।19।।

श्रावक भक्ति समेत, सिद्धबिंब को पूजें।
भवदधि शोषण हेत, करें प्रयत्न सुनीके।।
उत्तर दिश सिद्धार्थ, पारिजात तरु जानो।
सिद्धबिंब हैं चार, वंदत भव दुख हानों।।20।।

पद्मप्रभु भगवान, समवसरण में तिष्ठें।
उन अतिशय से भव्य, असंख्य मिलकर बैठें।।
पूरबदिश सिद्धार्थ, वृक्ष नमेरु मानों।
सिद्ध बिंब हैं चार, वंदत भव दुख हानों।।21।।

इन्द्र सभी परिवार, लेकर वहाँ पे आवें।
भरें पुण्य भंडार, जिनवर गुण को गावें।।
दक्षिण दिश मंदार, तरु सिद्धार्थ बखानों।
सिद्धबिंब हैं चार, वंदत भव दुख हानों।।22।।

धन जन सुख परिवार, बढ़ता जिन भक्ती से।
मिले मुक्ति का द्वार, स्वपर भेद युक्ती से।।
पश्चिम दिश सिद्धार्थ, संतानक तरु जानों।
सिद्धबिंब हैं चार, वंदत भव दुख हानों।।23।।

मिले राज्य सम्मान, जग में मान्य कहावें।
जो करते गुणगान, जिनवर भक्ति बढ़ावें।।
उत्तर दिश सिद्धार्थ, पारिजात तरु जानों।
सिद्धबिंब हैं चार, वंदत भव दुख हानों।।24।।

श्री सुपार्श्व जिनराज, भविजन मन तम हरते।
जो वंदे प्रभुपाद अतिशय, सुख निधि भरते।।
पूरब दिश सिद्धार्थ, वृक्ष नमेरु जानों।
सिद्ध बिंब हैं चार, वंदत भव दुख हानों।।25।।

त्रिभुवन वैभव पूर्ण, समवसरण सुखकारी।
भव्य करें भव चूर्ण, नित पूजें मनहारी।।
दक्षिण दिश मंदार, तरु सिद्धार्थ बखानो।
सिद्धबिंब हैं चार, वंदत भव दुख हानों।।26।

चिंतामणि जिनभक्ति, चिंतित फल को देवे।
जो वंदे निज शक्ति, झट प्रगटित कर लेवें।।
पश्चिम दिश सिद्धार्थ, संतानक तरु जानों।
सिद्धबिंब हैं चार, वंदत भव दुख हानों।।27।।

कल्पवृक्ष की भूमि, मुँहमाँगा फल देवे।
दर्श करें जो भव्य, सब उत्तम सुख लेवें।।

उत्तर दिश सिद्धार्थ, पारिजात तरु जानों।
सिद्धबिंब हैं चार, वंदत भव दुख हानों।।28।।

चंदा प्रभु भगवान, समवसरण नभ में है।
उन वचनामृतपान, करके भव्य नमें हैं।।
पूरबदिश सिद्धार्थ, वृक्ष नमेरू जानों।
सिद्ध बिंब हैं चार, वंदत भव दुख हानों।।29।।

चंद्र सदृश आल्हाद, करते जिनवच जग में।
जो वंदते चरणाब्ज, झट पहुँचे शिवपद में।।
दक्षिण दिश मंदार, तरु सिद्धार्थ बखानों।
सिद्धबिंब हैं चार, वंदत भव दुख हानों।।30।।

निज परिवार समेत, चंद्र सूर्य सुर आवें।
निज पद पावन हेतु, प्रभु नमें गुण गावें।।
पश्चिम दिश सिद्धार्थ, संतानक तरु जानों।
सिद्धबिंब हैं चार, वंदत भव दुख हानों।।31।।

चंद्रकिरण समश्वेत, जिनवर तन अति सुंदर।
नेत्र हजार बनाय, दर्शन करें पुरंदर।।
उत्तर दिश सिद्धार्थ, पारिजात तरु जानों।
सिद्धबिंब हैं चार, वंदत भव दुख हानों।।32।।

–वसंततिलका छंद–

श्रीपुष्पदंत जिनसर्वहितानुशास्ता।
जो वंदते समवसर्ण हरें असाता।।
है पूर्वदिक् तरु नमेरु नमें मुनींद्रा।
मैं सिद्धबिंब प्रणमूं यजते सुरेंद्रा।।33।।

मंदार वृक्ष प्रतिमा यजते सदा जो।
स्वात्मैक सौख्य संपति भरते सदा वो।।

सिद्धार्थ वृक्ष सुखदायि नमें मुनींद्रा।
मैं सिद्धबिंब प्रणमूं यजते सुरेंद्रा।।34।।

संतानकाख्य तरु में प्रतिमा नमें जो।
संसार घोर वन में न कभी भ्रमें वो।।
सिद्धार्थ वृक्ष प्रतिमा नमते मुनींद्रा।
मैं सिद्धबिंब प्रणमूं यजते सुरेंद्रा।।35।।

जो पारिजात तरु की प्रतिमा नमें हैं।
वे रोग शोक दुख संकट से बचे हैं।।
सिद्धार्थ वृक्ष सुखदायि नमें मुनींद्रा।
मैं सिद्धबिंब प्रणमूं यजते सुरेंद्रा।।36।।

श्री शीतलेश वचनामृत तापहारी।
जो वंदते समोसर्ण न हों दुखारी।।
है पूर्वदिक् तरु नमेरु नमें मुनींद्रा।
मैं सिद्धबिंब प्रणमूं यजते सुरेंद्रा।।37।।

मंदार वृक्ष प्रतिमा सुर वृंद नमें।
संसार सौख्य भज निज त्रय रत्न लूटें।।
सिद्धार्थ वृक्ष प्रतिमा नमते मुनींद्रा।
मैं सिद्धबिंब प्रणमूं यजते सुरेंद्रा।।38।।

संतानकाख्य तरु में प्रतिमा यजें जो।
संतान मोह अरि को उनकी नशे जो।।
है कल्पभूमि सिद्धार्थ नमें मुनींद्रा।
मैं सिद्धबिंब प्रणमूं यजते सुरेंद्रा।।39।।

जो पारिजात तरु की प्रतिमा नमें हैं।
वे पाप ताप हर स्वात्म सुधा चखे हैं।।
है कल्पभूमि सिद्धार्थ नमें मुनींद्रा।
मैं सिद्धबिंब प्रणमूं यजते सुरेंद्रा।।40।।

श्रेयांसनाथ जिनका जु समोसरण है।
सिद्धार्थ वृक्षदिक् पूर्व अपूर्व सो है।।
रम्या नमेरु प्रतिमा नमते मुनींद्रा।
मैं सिद्धबिंब प्रणमूं यजते सुरेंद्रा।।41।।

मंदार वृक्ष दिश दक्षिण में सुहाता।
जो भव्य नित्य नमते तम भाग जाता।।
भक्ती करें सम सुधा रसिका मुनींद्रा।
मैं सिद्धबिंब प्रणमूं यजते सुरेंद्रा।।42।।

सिद्धार्थ वृक्ष संतानक को नमें जो।
संतान सौख्य धन धान्य समृद्धि ले वो।।
ऋद्धिधरा सतत ध्यान धरें मुनींद्रा।
मैं सिद्धबिंब प्रणमूं यजते सुरेंद्रा।।43।।

जो पारिजात तरु की प्रतिमा भजे हैं।
वे जन्म मृत्यु भय से निश्चित छुटे हैं।।
भक्ती भरे स्तुति पढ़े नित ही मुनींद्रा।
मैं सिद्धबिंब प्रणमूं यजते सुरेंद्रा।।44।।
श्री वासुपूज्य तनु लाल सरोज जैसा।
सुंदर दिखे समवसर्ण अपूर्व वैसा।।
है पूर्वदिक् तरु नमेरु नमें मुनींद्रा।
मैं सिद्धबिंब प्रणमूं यजते सुरेंद्रा।।45।।

मंदार वृक्ष फलदायि अपूर्व सोहे।
जैनेन्द्र बिंबयुत मानस्तंभ मोहे।।
सर्वार्थसिद्धि सुख हेतु नमें मुनींद्रा।
मैं सिद्धबिंब प्रणमूं यजते सुरेंद्रा।।46।।

संतानकादि तरु पश्चिम में खड़ा है।
इंद्रादि पूज्य गुण अतिशय से बड़ा है।।
आनंद धाम पद हेतु नमें मुनींद्रा।
मैं सिद्धबिंब प्रणमूं यजते सुरेंद्रा।।47।।

है पारिजात तरु उत्तर में अनोखा।
जो वंदते फल लहें अतिशायि चोखा।।
आत्मा पवित्र करके नमते मुनींद्रा।
मैं सिद्धबिंब प्रणमूं यजते सुरेंद्रा।।48।।

–भुजंगप्रयात छंद–

समोसर्ण को पूजते भक्ति से जो।
लहें सौख्य संपद नवों निद्धि को वो।।
नमेरु तरू में नमूं सिद्ध देवा।
करूँ आपके पाद की नित्य सेवा।।49।।

विमलनाथ का है समोसर्ण सोहे।
दिशा दक्षिणी वृक्ष मंदार मोहे।।
चतुर्दिक् तरू के नमूं सिद्ध देवा।
करूँ आपके पाद की नित्य सेवा।।50।।
सुरासुर व किन्नर सदा कीर्ति गाते।
बृहस्पति गुणों का नहीं पार पाते।।
सुसंतानकं के नमूं सिद्ध देवा।
करूँ आपके पाद की नित्य सेवा।।51।।

सुरों की वहाँ टोलियाँ आ रही हैं।
करें नित्य भी अप्सरा गा रही है।।
नमूँ पारिजाताग[1] के सिद्ध देवा।
करूँ आपके पाद की नित्य सेवा।।52।।

1. पारिजात नाम का अग–वृक्ष।

अनंताधिपति का समोसर्ण पूजें।
नमेरू तरू को नमें पाप धूजें।।
सुसिद्धार्थ के मैं नमूं सिद्ध देवा।
करूँ आपके पाद की नित्य सेवा।।53।।

हरो दुःख मेरे अनंतों भवों के।
हमें सौख्य देवो अनंते स्वयं के।।
सुमंदार के मैं नमूं सिद्ध देवा।
करूँ आपके पाद की नित्य सेवा।।54।।

महामोह अंधेर छाया हृदय में।
उसे दूर कर ज्ञान ज्योति भरूँ मैं।।
सुसंतानकांघ्रिप[1] नमूं सिद्ध देवा।
करूँ आपके पाद की नित्य सेवा।।55।।

अनंते चतुष्टय कि लक्ष्मी धरे हैं।
अठारह महादोष तुमसे परे हैं।।
महा पारिजातं नमूं सिद्ध देवा।
करूँ आपके पाद की नित्य सेवा।।56।।

धरमनाथ का है समोसर्ण दीपे।
वहाँ पूर्वदिक् में नमेरू तरू पे।।
नमूँ शीश नाके नमूं सिद्ध देवा।
करूँ आपके पाद की नित्य सेवा।।57।।

समोसर्ण में भूमि छट्ठी दिपे हैं।
नमूँ नित्य जो बिंब मंदार पे हैं।।
नमें इंद्र मैं भी नमूं सिद्ध देवा।
करूँ आपके पाद की नित्य सेवा।।58।।

भरी कल्पतरु से छठी भूमि दीखे।
सभी के वहाँ पे मनोरथ फले थे।।

1. अंघ्रिप–वृक्ष।

महावृक्ष संतानकं सिद्ध देवा।
करूँ आपके पाद की नित्य सेवा।।59।।

सुसिद्धार्थ तरु पारिजात नमें जो।
चतुर्दिक्क प्रतिमा हरें कर्म सब वो।।
फलें सर्ववांछित नमूं सिद्ध देवा।
करूँ आपके पाद की नित्य सेवा।।60।।

प्रभो शांति ईश्वर जगत् शांति कर्ता।
नमेरु तरू को नमूँ सौख्य भर्ता।।
पुनर्जन्म नाशो नमूं सिद्ध देवा।
करूँ आपके पाद की नित्य सेवा।।61।।

मुनीचित्त पंकज खिलाते रवी हो।
महाशांतिदाता विधाता शशी हो।।
सुमंदार तरु के नमूं सिद्ध देवा।
करूँ आपके पाद की नित्य सेवा।।।62।।

समोसर्ण शांतीश का सौख्यकारी।
वहाँ कल्पभूमी फलें इष्ट भारी।।
सुसंतानकांघ्रिप नमूं सिद्ध देवा।
करूँ आपके पाद की नित्य सेवा।।63।।

महावृक्ष है पारिजाताख्य उसमें।
चतुर्दिक्क सुरपूज्य प्रतिमा उसी में।।
गणीश्वर नमें मैं नमूं सिद्ध देवा।
करूँ आपके पाद की नित्य सेवा।।64।।

–दोहा–

कुंथुनाथ जिनराज का, समवसरण अभिराम।
छट्ठी भूमि नमेरु के, नमूं सिद्ध सुखधाम।।65।।

समवसरण दक्षिणदिशी, तरु मंदार महान्।
नमूं सिद्ध प्रतिमा सदा, पाऊँ स्वात्मनिधान।।66।।

समवसरण पश्चिमदिशी, सन्तानक सिद्धार्थ।
सिद्धबिंब चउदिश नमूं, पूर्ण फलें सर्वार्थ।।67।।

उत्तर दिश में कल्पतरु, भूमि सर्व हितकार।
पारिजात तरु बिंब को, नमूं सर्व सुखकार।।68।।

अरहनाथ जिननाथ का, समवसरण जग श्रेष्ठ।
नमूं सिद्ध प्रतिमा सदा, तरु नमेरु सब ज्येष्ठ।।69।।

तीर्थनाथ को पूजते, अंत मिले जिननाम।
सिद्धारथ मंदार के, सिद्ध नमूं गुणधाम।।70।।

करूँ तीर्थपति अर्चना, खंडित हो यमराज।
संतानक तरु बिंब को, नमत मिले निज राज्य।।71।।

अर जिनवर की भक्ति से, मुक्तिरमा वश होय।
पारिजात तरु बिंब को, नमूं स्वात्म सुख होय।।72।।

मल्लिनाथ का जगत् में, समवसरण अतिरम्य।
तरु नमेरु के बिंब को, नमत मिले शिवशर्म।।73।।

मोहराज यमराज को, जीत बने जगदीश।
दक्षिणदिश मंदार के, बिंब नमूं नत शीश।।74।।

क्षमाभाव से क्रोध को, किया निमूल जिनेश।
संतानक तरु अपरदिश, नमूं मिटे भव क्लेश।।75।।

लोभ पाप को नष्ट कर, पाया त्रिभुवन राज्य।
पारिजात तरु बिंब को, नमत लहूँ निजराज्य।।76।।

मुनिसुव्रत भगवान का, समवसरण सुरवंद्य।
तरु नमेरु के बिंब को, वंदूं जग अभिनंद्य।।77।।

वंदूं सदा जिनदेव का, समवसरण अतिशायि।
सिद्धबिंब मंदार के, नमूं सर्व सुखदायि।।78।।

त्रिभुवन जनता पूज्य है, समवसरण गुणधाम।
संतानक तरु बिंब को, नमूं मिले निजधाम।।79।।

महामोह अज्ञानहर, ज्ञान ज्योति से पूर्ण।
पारिजात के बिंब को, नमत करूँ यम चूर्ण।।80।।

–चौपाई–

नमि जिन समवसरण अभिरामा, नमत भव्य बनते निष्कामा।
तरु नमेरु के चउदिश सिद्धा, वंदत करूँ विघन अरिविद्धा[1] ।।81।।

नमिजिनवर दुख संकट हारी, जो जन नमें वरें शिव नारी।
तरु मंदार चतुर्दिश सिद्धा, वंदत करूँ विघन अरिविद्धा।।82।।

श्री नमिनाथ स्वात्मसुख भोगें, जो जन नमें परम सुख भोगें।
संतानक तरु चउदिश सिद्धा, वंदत करूँ विघन अरिविद्धा।।83।।

नमिजिन पाद सरोज नमें जो, सर्व उपद्रव दूर भगें जो।
पारिजात तरु चउदिश सिद्धा, वंदत करूँ विघन अरिविद्धा।।84।।
नेमिनाथ करुणा के सिंधु, नमत चखूँ समरस सुखबिंदू।
तरु नमेरु के चउदिश सिद्धा, वंदत करूँ विघन अरिविद्धा।।85।।

शिवललना के जिनवरस्वामी, त्रिभुवन के प्रभु अंतर्यामी।
तरु मंदार चतुर्दिश सिद्धा, वंदत करूँ विघन अरिविद्धा।।86।।

जगत्पूज्य सुरनर खग ईशा, जो पूजें सो लहें मनीषा।
संतानक चरु चउदिश सिद्धा, वंदत करूँ विघन अरिविद्धा।।87।।

सौधर्मेन्द्र नरेन्द्र फणीन्द्रा, जिनचरणांबुज नमें मुनींद्रा।
पारिजात तरु चउदिश सिद्धा, वंदत करूँ विघन अरिविद्धा।।88।।

समवसरण जिन पारसनाथा, पद्मावति फणपति नत माथा।
तरु नमेरु के चउदिश मूर्ती, वंदत हो मुझ वांछा पूर्ती।।89।।

1. बेध करूँ–नष्ट करूँ।

समवसरण सुरवंद्य जिनंदा, वंदत सुरनर खग रविचंदा।
तरु मंदार चतुर्दिश मूर्ती, वंदत हो मुझ वांछा पूर्ती।।90।।

कमठ मान भंजन जिनराजा, भविजन पूजें निजहित काजा।
संतानक तरु चउदिश मूर्ती, वंदत हो मुझ वांछा पूर्ती।।91।।

कलियुग पाप दलन जगख्याता, तुम यश गातीं शारद माता।
पारिजात तरु चउदिश मूर्ती, वंदत हो मुझ वांछा पूर्ती।।92।।

समवसरण जिनगुण मणिमाली, नमत बने नर महिमाशाली।
तरु नमेरु में सिद्धन मूर्ती, वंदत हो मुझ वांछा पूर्ती।।93।।

समवसरण में राजें वीरा, महावीर सन्मति अतिवीरा।
तरु मंदारसिद्ध की मूर्ती, वंदत हो मुझ वांछा पूर्ती।।94।।

वर्द्धमान जिनवर को वंदे, पाप अद्रि हों सौ सौ खंडे।
संतानक तरु सिद्धन मूर्ती, वंदत हो मुझ वांछा पूर्ती।।95।।

सर्वोत्तम कल्पद्रुम वीरा, बिन मांगे फल पावें धीरा।
पारिजात तरु सिद्धन मूर्ती, वंदत हो मुझ वांछा पूर्ती।।96।।

–गीता छंद–

इस कल्पतरु भूमि में, सिद्धार्थ तरु चारों दिशी।
श्री सिद्धबिंब विराजते, प्रत्येक तरु के चहुँदिशी।।
एकेक मानस्तंभ हैं, प्रत्येक प्रतिमा के निकट।
उनमें चतुर्दिश बिंब जिनवर, वंदते ही शिव निकट।।97।।

सिद्धार्थ वृक्ष महिमा

–दोहा–

कल्पवृक्ष चिंतामणी, जिनभक्तों के दास।
नमत ज्ञानमती पूर्ण हो, पहुँचूँ जिनवर पास।।98।।

चाल–हे दीनबन्धु.....

धनि धन्य सिद्ध वृंद जो सिद्धालयों में हैं।
धनि धन्य सिद्ध बिंब जो सिद्धार्थ तरु में हैं।।

धनि धन्य तीर्थकृत समोसरण महान हैं।
धनि धन्य समोसरण स्वात्म गुण निधान हैं।।99।।

जो कल्पतरु नाम की छट्ठी धरा वहाँ।
हैं कल्पवृक्ष दशविधा चउदिश दिखे वहाँ।।
जन मांगते जो कुछ भी वे वृक्ष दे रहे।
सुरगण वहाँ पे आके क्रीड़ा में रत रहें।।100।।

पानांग वृक्ष बहुते विध पेय दे रहे।
तूर्यांग वाद्यवीणा मृदंग दे रहे।।
तरु भूषणांग बहुत से गहने दिया करें।
वस्त्रांग बहुत वस्त्र धोतियाँ दिया करें।।101।।

तरु भोजनांग विविध भोज्य वस्तु दे रहे।
तरु आलयांग महल कोठियाँ भी दे रहे।।
दीपांग दीप दे रहे सुंदर प्रकाशयुत।
तरु भाजनांग थाल आदि पात्र दें विविध।।102।।

मालांग वृक्ष सुरभि पुष्पमाल दे रहे।
तेजांग वृक्ष कोटि सूर्य ज्योति हर रहे।।
उस भूमि में कहीं पर ऊँचे भवन बनें।
कहिं बावड़ी जलों में फूले कुसुम घनें।।103।।

प्रत्येक दिश में इक इक सिद्धार्थ वृक्ष हैं।
तरु मूल में चतुर्दिक् श्री सिद्धबिंब हैं।।
प्रत्येक बिंब आगे इक मानथंभ हैं।
ये तीन कोट सहिते त्रयपीठ उपरि हैं।।104।।

एकेक समवसृति में, सिद्धार्थ चार-चार।
एकेक तरु में सिद्धों के बिंब चार-चार।।
एकेक मानथंभों में बिंब चार-चार।
सिद्धों के बिंब सोलह, चौसठ सु जिनाकार।।105।।

चौबीस समवसृति में, तरु छयान्वे सिद्धार्थ।
वे तीन सौ चुरासी, तरु सिद्धबिंब सार्थ।।
इतने हि मानथंभों[1] में, बिंब चतुर्दिश।
वे बिंब सर्व इक हजार पाँच सौ छत्तिस।।106।।

सौ इंद्र भक्ति से वहाँ पे वंदना करें।
नर नारियाँ भि द्रव्य लेय अर्चना करें।।
सुर अप्सरायें नित्य वहाँ नृत्य कर रहीं।
सुर किन्नरी वीणा व बांसुरी बजा रहीं।।107।।

चारों गली में चार-चार नाट्य[2] शालिका।
बत्तीस रंगभूमियुक्त पाँच खन युता।।
प्रत्येक में बत्तीस हि ज्योतिष्क देवियाँ।
वे नृत्य करें भक्ति भरीं, पुण्य देवियाँ।।108।।

इस भूमि के आगे चतुर्थ वेदिका बनी।
गोपुर पे देव भावन रक्षा करें घनी।।
प्रतिद्वार मंगलद्रव्य इक सौ आठ इकसौ आठ।
प्रत्येक तोरणद्वार पे नवनिधि के रहें ठाठ।।109।।

बहुविध अनेक वर्णना कोई न कह सके।
धनपति वहाँ जिनके प्रभाव से हि रच सके।।
मैं सिद्धबिंब की सदैव वंदना करूँ।
तीर्थेश भक्ति से दुखों को रंच ना धरूँ।।110।।

–दोहा–

तीन रत्न के हेतु मैं, नमूँ अनंतों बार।
ज्ञानमती की याचना, पूरो नाथ अबार।।111।।

1. तिलोयपण्णत्ति से। 2. तिलोयपण्णत्ति से।

प्रशस्ति

–शंभु छंद–

श्री शांति कुंथु अरनाथ प्रभु ने, जन्म लिया इस धरती पर।
यह हस्तिनागपुरि इंद्रवंद्य, रत्नों की वृष्टि हुई यहाँ पर।।
यहाँ जंबूद्वीप बना सुंदर, जिनमंदिर हैं अनेक सुखप्रद।
मेरा यहाँ वर्षायोग काल, स्वाध्याय ध्यान से है सार्थक।।1।।

इस युग के चारित्र चक्री श्री, आचार्य शांतिसागर गुरुवर।
बीसवीं सदी के प्रथमसूरि, इन पट्टाचार्य वीरसागर।।
ये दीक्षा गुरुवर मेरे हैं, मुझ नाम रखा था 'ज्ञानमती'।
इनके प्रसाद से ग्रंथों की, रचना कर हुई अन्वर्थमती।।2।।

सिद्धार्थ वृक्ष स्तोत्र लघु, सिद्धों की प्रतिमा भक्तीवश।
यह रोग शोक दारिद्र्य दुःख, संकट हरने वाला संतत।।
जब तक चौबीसों तीर्थंकर, जिनशासन जग में मान्य रहे।
तब तक यह गणिनी ज्ञानमती, विरचित स्तोत्र जयशील रहे।।3।।

इति समवसरणसिद्धार्थवृक्षस्तोत्रं समाप्तं।
जैनं जयतु शासनम्।

देव का लक्षण

सो देवो जो अत्थं धम्मं कामं सुदेइ णाणं च।
सो देइ जस्स अत्थि दु अत्थो धम्मो य पव्वज्जा।।

'जो देवे सो देव' इस व्युत्पत्ति के अनुसार जो अर्थ–निधि, रत्न आदि धन को देता है, धर्म–चारित्र लक्षण धर्म को, दया लक्षण धर्म को, वस्तु स्वरूप लक्षण धर्म को, आत्मा की उपलब्धि लक्षण धर्म को और उत्तम क्षमादि दशभेद लक्षण धर्म को देता है। काम–अर्ध-मंडलीक, मंडलीक, महामंडलीक, बलदेव, वासुदेव, चक्रवर्ती और धरणेन्द्र के भोगरूप काम को देता है तथा केवल ज्योति–स्वरूप ज्ञान को देता है वह देव है। क्योंकि जिसके पास जो है वह वही देता है और जिनेन्द्रदेव के पास अर्थ है, धर्म है एवं प्रव्रज्या है इसीलिए वह अर्थ, धर्म और प्रव्रज्या–सर्व सौख्यमय दीक्षा को देते हैं।

–भगवान कुंदकुंददेव, बोधपाहुड़ गाथा 24

समवसरण स्तूप स्तोत्र

मंगलाचरण

अर्हन्तो मंगलं कुर्युः, सिद्धाः कुर्युश्च मंगलम्।
तेषां सर्वाणि विंबानि, कुर्वन्तु मम मंगलम्।।1।।

तीर्थकृत्सन्निधौ भान्ति, नवस्तूपाः सुरैर्नुताः।
तत्रस्था जिनसिद्धार्चाः, ते ताश्च सन्तु मंगलम्।।2।।

–नरेन्द्र छंद–

समवसरण में सप्तमभूमि, भवनभूमि मुनि कहते।
उनमें भवन बने अति ऊँचे देव देवि वहँ रहते।।
चारों गलियों में नव-नव, स्तूप बने मणियों के।
उनमें रत्नमयी जिनप्रतिमा, वंदूँ श्रद्धा करके।।3।।

–दोहा–

समवसरण में सातवीं, भवनभूमि सुखकार।
वहाँ स्तूप जिनबिम्ब को, नमूँ होऊँ भव पार।।4।।

–नरेन्द्र छंद –

श्री वृषभदेव की पूर्व गली में, नव स्तूप बखाने।
उसमें जिन सिद्धों की प्रतिमा, भविजन के अघ हाने।।
नव पदार्थ की श्रद्धा करके सम्यक्रत्न धरूँ मैं।
नव केवल लब्धी हेतू ही, नित प्रति नमन करूँ मैं।।1।।

समवसरण की दक्षिण वीथी, नव स्तूप खड़े हैं।
उनमें जिन प्रतिमा को वंदत, धन जन सुयश बढ़े हैं।।नव.।।2।।

समवसरण में तृतिय गली में, नवस्तूप मनोहर।
गणधर मुनिगण जिनप्रतिमा को, वंदत सर्व तमोहर।।नव.।।3।।

भवनभूमि चौथी वीथी में नव स्तूप दिपे हैं।
वंदत ही दुख दारिद संकट, तन मन व्याधि खिपे[1] हैं।।नव.।।4।।

अजितनाथ के समवसरण में, भवन भूमि सप्तम है।
प्रथम गली में सुर नर वंदित, नव स्तूप उत्तम हैं।।नव.5।।

समवसरण में द्वितिय गली में, नवस्तूप अति ऊँचे।
मुनिगण प्रदक्षिणा दे करके, वंदत निज में पहुँचे।।नव.।।6।।

नव स्तूप रत्नों से निर्मित, मणिमय जिन बिंबों युत।
मन वच तन से वंदन करते, भविजन बहु भक्तीयुत।।नव.।।7।।

पद्मराग मणियों से निर्मित, नवस्तूप अति शोभे।
जिन प्रतिमा को वंदें भविजन, सुर किन्नर मन लोभें।।नव.।।8।।

संभवजिन के समवसरण में, भवनभूमि भवनों युत।
दर्शन करते प्रथम गली में, नव स्तूप बिंबों युत।।नव.।।9।।

समवसरण में भवन भूमि में, ऊँचे भवन बने हैं।
द्वितीय गली में नव स्तूप की, प्रतिमा भविक नमें हैं।।नव.।।10।।

भवन भूमि के महलों में नित, सुर जिन न्हवन रचाते।
नृत्य करें बहु नव स्तूप की, जिन प्रतिमा गुण गाते।।नव.।।11।।

दो त्रय चार पांच खन महलों, में सुर खग रहते हैं।
जिनगुण गाते नवस्तूप की प्रतिमा को नमते हैं।।नव.।।12।।

अभिनंदन प्रभु सवसरण में, भवन भूमि अतिसुन्दर।
वापी पर्वत बने मनोहर, नवस्तूप प्रतिमा धर।।नव.।।13।।

भवन भूमि में उपवन सुंदर, बहुविध वृक्ष फले हैं।
द्वितिय भूमि में नवस्तूप में, जिनवर बिंब भले हैं।।नव.।।14।।

समवसरण में नवस्तूप में, चित्र विचित्रित रचना।
अर्हत सिद्ध बिंब को नमते, भव भव दुख से बचना।।नव.।।15।।

भवनभूमि में बावड़ियों में, सुंदर कमल खिले हैं।
नव स्तूप को नमते मुनि के, चित्त सरोज खिले हैं।।नव.।।16।।

---

1. नष्ट होती हैं।

–पद्धड़ी छंद –

जिनसुमतिनाथ का समवसर्ण, उतं भवनभूमि है विविध वर्ण।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित वंदूँ जिन सिद्ध बिंब।।17।।

जिन समवसरण में भवन भूमि, वंदन से मिलती मोक्ष भूमि।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित वंदूँ जिन सिद्ध बिंब।।18।।

जिन भवन भूमि है सौख्यकार, मुनिगण वहाँ करते नित विहार।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित वंदूँ जिन सिद्ध बिंब।।19।।

जिनसमवसरण में भवन पंक्ति, जहं रमती हैं सुर मनुज पंक्ति।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित वंदूँ जिन सिद्ध बिंब।।20।।

जिनपद्मप्रभू का समवसर्ण, सब भव्यों ने ली वहाँ शर्ण।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित वंदूँ जिन सिद्ध बिंब।।21।।

जो जिन पूजें तज सकल आधि, वो पा लेते अंतिम समाधि।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित वंदूँ जिन सिद्ध बिंब।।22।।

जो समवसरण दर्शन करंत, वो भव्य भवोदधि को तरंत।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित वंदूँ जिन सिद्ध बिंब।।23।।

जिन समवसरण में महलतुंग, सब जन का करते मानभंग।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित वंदूँ जिन सिद्ध बिंब।।24।।

जिनवर सुपार्श्व का समवसर्ण, उसमें रचना है विविध वर्ण।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित वंदूँ जिन सिद्ध बिंब।।25।।

जो समवसरण से करे प्रेम, उनके हर क्षण ही सकल क्षेम।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित वंदूँ जिन सिद्ध बिंब।।26।।

जिन समवसरण में सभी जंतु, सब वैर भाव तज बने बंधु।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित वंदूँ जिन सिद्ध बिंब।।27।।

1. वहाँ पर।

जिन समवसरण में साधु वृंद, ले स्वात्म सुधारस का अनंद।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित वंदूँ जिन सिद्ध बिंब।।28।।

जिन चंद्रनाथ से जग सनाथ, गणधर नित नमते नमां माथ।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित वंदूँ जिन सिद्ध बिंब।।29।।

जिन समवसरण में भवन भूमि, वंदन से मिलती सिद्धभूमि।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित वंदूँ जिन सिद्ध बिंब।।30।।

चंदप्रभु हरते जगत ताप, उन नाम मंत्र सब हरे पाप।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित वंदूँ जिन सिद्ध बिंब।।31।।

वंदन से होते कर्मक्षार, जिनसमवसरण अतिशय अपार।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित वंदूँ जिन सिद्ध बिंब।।32।।

–चौपाई –

पुष्पदंत त्रिभुवन भगवंत, समवसरण उन अतिशयवंत।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, वंदत कटें कर्म कटुनिंब।।33।।

जिनवर समवसरण सुखसार, भविजन को शिवसुख दातार।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, वंदत कटें कर्म कटुनिंब।।34।।

स्पर्श गंध रस वर्ण विहीन, श्री जिननाथ विविध गुणलीन।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, वंदत कटें कर्म कटुनिंब।।35।।

निज आतम परमात्म समान, जिनवर भक्ति करे भगवान।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, वंदत कटें कर्म कटुनिंब।।36।।

शीतल समवसरण अभिराम, तुम पद भक्त लहे निजधाम।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, वंदत कटें कर्म कटुनिंब।।37।।

श्री शीतल जग शीतल करें, साम्य सुधारस वर्षा करें।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, वंदत कटें कर्म कटुनिंब।।38।।

चिन्मय चिंतामणि भगवान, भक्त लहे इच्छित वरदान।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, वंदत कटें कर्म कटुनिंब।।39।।

लोकालोक प्रकाशी ज्ञान, ज्ञान मेरा कैवल्य समान।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, वंदत कटें कर्म कटुनिंब।।40।।

समवसरण में रहें जिनेश, श्री श्रेयांस जगत् परमेश।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, वंदत कटें कर्म कटुनिंब।।41।।

गणधर जिनगुण में लवलीन, आत्म सुधारस पिये प्रवीण।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, वंदत कटें कर्म कटुनिंब।।42।।

जिनवर की दिव्यध्वनि खिरे, परमानंद सुख झरना झरे।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, वंदत कटें कर्म कटुनिंब।।43।।

जिन श्रेयांस त्रिभुवन के नाथ, द्वादश गण को करें सनाथ।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, वंदत कटें कर्म कटुनिंब।।44।।

वासुपूज्य वासवगण[1] पूज्य, भक्त बने भी क्षण में पूज्य।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, वंदत कटें कर्म कटुनिंब।।45।।

समवसरण जिनगुणमणिराशि, पूजत पावें निज गुणराशि।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, वंदत कटें कर्म कटुनिंब।।46।।

जिनवर भवन भूमि फलदायि, वंदत पुण्य बंधे अतिशायि।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, वंदत कटें कर्म कटुनिंब।।47।।

वासुपूज्य को पूजें भव्य, निजसमरस सुख पावें नव्य।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, वंदत कटें कर्म कटुनिंब।।48।।

–स्रग्विणी छंद –

श्री विमलनाथ जी के समोसर्ण में,
सातवीं भूमि नित सौख्य देवे हमें।
स्तूप के बिंब को वंदते शोक ना,
इष्ट वीयोग आनिष्ट संयोग ना।।49।।

1. देवगण।

जो समोसर्ण में वंदते नाथ को।
प्राप्त हों स्वात्म की सौख्य संपत्ति को।।स्तूप.।।50।।

जो क्षमाभाव से क्रोध को वारते।
स्वात्म पीयूष आनंद वो पावते।।स्तूप.।।51।।

जो मृदूभाव से मान को मारते।
इन्द्र से भी सदा मान वो पावते।।स्तूप.।।52।।

जो अनंतेश की दिव्यध्वनि को सुनें।
वे स्वयं शुद्ध निज तत्त्व को ही गुने।।स्तूप.।।53।।

जो सदा भक्ति से नाथ गुण गावते।
इन्द्र भी प्रीति से उन सुयश गावते।।स्तूप.।।54।।

जो करें नृत्य संगीत भक्ती भरे।
इन्द्र उनके निकट नृत्य तांडव करें।।स्तूप.।।55।।

जो प्रभू पास में आ चमर ढोरते।
इन्द्र भी उनके ऊपर चमर ढोरते।।स्तूप.।।56।।

धर्मतीर्थेश वीहार करते भले।
धर्म का चक्र उन आगे आगे चले।।स्तूप.।।57।।

जो तुम्हारे उपरि छत्र को धारते।
इन्द्र भी उसके ऊपर छतर लावते।।स्तूप.।।58।।

जो करें नित्य अभिषेक जिनबिंब का।
इन्द्र करते न्हवन मेरु पे उन्हीं का।।स्तूप.।।59।।

स्तूप के बिंब की जो करें अर्चना।
आधि व्याधी कभी भी उन्हें रंच ना।।स्तूप.।।60।।

शांति तीर्थेश चक्रीश कामेश हैं।
शांति के हेतु हम नाथ को नमत हैं।।स्तूप.।।61।।

नाथ शांतीश का जो समोसर्ण है।
वो भवांभोधि तारण तरण एक है।।स्तूप.।।62।।

स्तूप पे छत्र फिरते चंवर ढुर रहें।
तोरणों पुष्प हारों से शोभित रहें।।
स्तूप के बिंब को वंदते शोक ना,
इष्ट वीयोग आनिष्ट संयोग ना।।63।।

स्तूप के बिंब को नित्य मुनि वंदते।
जो नमें वे महामोह को खंडते।।स्तूप.।।64।।

–चामर छंद –

कुंथुनाथ का समोसरण महान् विश्व में।
सातवीं मकान पंक्ति भूमि सौख्य दे हमें।।
स्तूप के अर्हंत सिद्धबिंब को सदा नमूँ।
ज्ञान दर्श सौख्य वीर्य स्वात्म संपदा भजूं।।65।।

नाथ भक्ति कर्म पंक धोवने समर्थ है।
स्थान सप्त परम को प्रदान हेतु दक्ष है।।स्तूप.।।66।।

नित्य वंदना करें जिनेश की शतेन्द्र भी।
आप भक्ति से पशू व नारकी न हों कभी।।स्तूप.।।67।।

एक नाथ भक्ति सर्व पाप नाश हेतु है।
घोर भव समुद्र पार हेतु एक सेतु है।।स्तूप.।।68।।

नाथ अर जिनेश का समोसरण अपूर्व है।
आप भक्ति भाव से रचे उसे कुबेर हैं।।स्तूप.।।69।।
आप पादपद्म का शरण लिया मुनीश ने।
आत्म सौख्य प्राप्ति हेतु बार बार ही नमें।।स्तूप.।।70।।

द्रव्य कर्म से विहीन आत्मा स्वतंत्र है।
नाथ भक्ति के प्रताप आत्मा पवित्र है।।स्तूप.।।71।।

सर्वकर्म से छुड़ाय मोक्ष में पठावते।
ध्यान आपका धरें निजात्म धाम पावते।।स्तूप.।।72।।

मल्लिनाथ का समोसरण त्रिलोक ख्यात है।
नाथ के अनंत गुण उन्हीं में आत्मसात् हैं।।स्तूप.।।73।।

आप नाम मात्र चिंतितार्थ वस्तु दे सके।
आप ध्यान से हि जन्म की परंपरा मिटे।।स्तूप.।।74।।

काम मल्ल मोहमल्ल मृत्युमल्ल हैं बड़े।
आपका प्रभाव देख आप के चरण पड़ें।।स्तूप.।।75।।

स्तूप आप देह से ही बारहे गुणे कहे।
पद्मराग से बने मुनींद्र वंद्य हो रहे।।स्तूप.।।76।।

नाथ मुनिसुव्रतेश का समोसरण दिपे।
नौ निधी वहाँ प्रतेक द्वार पे सदा दिखें।।स्तूप.।।77।।

साधु भी महाव्रतादि ले पवित्र हो रहे।
आत्म तत्त्व शुद्ध ध्याय कर्म पंक धो रहे।।स्तूप.।।78।।

नाथ पाद वंदना अनंत पाप खंडती।
स्वर्ग सौख्य देय गुण अनंत पे भि मंडती।।स्तूप.।।79।।

जो सदा चित्त में आप को धारते।
वे महात्मा पुरुष सर्व को तारते।।स्तूप.।।80।।

–सोरठा –

नमिजिन त्रिभुवन वंद्य, समवसरण में राजते।
नवस्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा वंदूँ सदा।।81।।

निजको निज में ध्याय, मुक्तिरमा को वश किया।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा वंदूँ सदा।।82।।

करे मोह का खंड, जिन प्रतिमा जिन सारखी।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा वंदूँ सदा।।83।।

निजानंद रसमग्न, फिर भी तिहुं जग देखते।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा वंदूँ सदा।।84।।

नेमिनाथ जग वंद्य, समवसरण महिमा प्रगट।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा वंदूँ सदा।।85।।

महिमा आप अचिन्त्य, गणधर भी नहिं कह सके।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा वंदूँ सदा।।86।।

तुम दर्शन से रम्य, सुख संपति नवनिधि मिले।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा वंदूँ सदा।।87।।

परमानंद निमग्न, परम ज्योति को धारते।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा वंदूँ सदा।।88।।

पार्श्वनाथ भगवंत, समवसरण त्रिभुवन शरण।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा वंदूँ सदा।।89।।

रोग शोक दुख द्वंद, तुम भक्ती से दूर हों।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा वंदूँ सदा।।90।।

वैर कलह जगनिंद्य, दूर भगे तुम भक्ति से।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा वंदूँ सदा।।91।।

कलियुग कष्ट अनंत, नश जाते तुम नाम से।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा वंदूँ सदा।।92।।

महावीर भगवंत, कल्पवृक्ष दाता तुम्हीं।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा वंदूँ सदा।।93।।

भविजन वहां असंख्य, समवसरण में बैठते।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा वंदूँ सदा।।94।।

सिद्धारथ के नंद, त्रिभुवन जन के हो पिता।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा वंदूँ सदा।।95।।

समवसरण जग वंद्य, भवन भूमि से शोभता।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा वंदूँ सदा।।96।।

–शंभु छंद–

प्रत्येक गली के नव नव ये, चारों के सब छत्तीस हुये।
चौबीस समवसृति के स्तूप, ये आठ शतक चौसष्ठ हुये।।

शिर छत्र फिरें अरु चंवर ढुरें, वंदनवारों से शोभ रहें।
हम वंदें जिन प्रतिमाओं को, सज्ज्ञानमती हो कर्म दहें।।97।।

स्तूप महिमा

–शंभु छंद–

जय जय जिनवर के समवसरण, जय सप्तम भवन भूमि प्यारी।
जय जय स्तूप जिन सिद्धबिंब, जय जय इनकी महिमा न्यारी।।
जय जय स्तूप पर छत्र फिरें, बहुवर्णध्वजायें फहरातीं।
जय मंगल द्रव्य वहां रक्खें, रत्नों की रचना मनभाती।।98।।

इन भवन भूमियों में ऊँचे, बहु महल बने सुर युगलों के।
संगीत नृत्य से देव वहां, अभिषेक करें जिनबिंबों के।।
कहिं स्वर्ण हिंडोले में बैठीं, देवी सब झूला झूल रहीं।
कहिं खिले कमल से हंसों से, वापी सब जन मन मोह रहीं।।99।।

प्रत्येक गली के मध्य बने, स्तूप विविध रत्नों के हैं।
उनके मधि मकराकार धरें, सौ-सौ तोरण रत्नों के हैं।।
ये अपने अपने जिनवर से, बारह गुणिते ऊँचे माने।
इनमें जिनबिंब बने मणिमय, उनकी भक्ती भवदुख हाने।।100।।

वहं छत्र चंवर भृंगार कलश, पंखा ठोना ध्वज दर्पण हैं।
ये मंगल द्रव्य आठ मानें, प्रत्येक एक सौ आठ रहें।।
इन स्तूपों के आसपास, मुनियों के सभाभवन दिखते।
जो वंदे इन सब मुनियों को, उनके सब पाप अरी भगते।।101।।

जहाँ प्रभु का समवसरण रहता, षट्ऋतु के फल फल जाते हैं।
सब ऋतु के फूल खिले सुंदर, दश दिश को भी महकाते हैं।।
सब जात विरोधी क्रूर पशू, आपस में मिलकर रहते हैं।
सुर मनुज पुराने वैर छोड़ आपस में प्रीति करते हैं।।102।।

यह समवसरण का ही प्रभाव, वहाँ जाते भव्य कहाते हैं।
मिथ्यात्व हलाहल विष उगलें, सम्यक्त्व निधी पा जाते हैं।।

निज में ही निज को पाकरके, निजआत्मा को ही ध्याते हैं।
फिर 'ज्ञानमती' पूरी करके, क्रम से शिवपद पा जाते हैं।।103।।

–दोहा –

धन्य धन्य जिनराज तुम, धन्य धन्य तुम भक्त।
धन्य तुम्हारी वंदना, धन्य धन्य यह वक्त।।104।।

प्रशस्ति

–दोहा –

श्री ऋषभदेव से वीर तक, तीर्थंकर भगवान।
सवमसरण को नित नमूं कोटि, नमूं शुभ ध्यान।।1।।

मूलसंघ में कुंदकुंद–अन्वय सरस्वति गच्छ।
बलात्कारगण में हुए, सूरि नमूँ मन स्वच्छ।।2।।

सदी बीसवीं के प्रथम गुरु महान आचार्य।
चरित चक्रवर्ती श्री–शांतिसागराचार्य।।3।।

इनके पहले शिष्य श्री–वीरसागराचार्य।
प्रथमहि पट्टाचार्य गुरु, नमूँ भक्ति उर धार्य।।4।।

यहां रत्नत्रयनिलय में, जिनवर चरण समीप।
जिनवर गुरुवर सरस्वती, इन चरणों में प्रीत।।5।।

समवसरणस्तूप का यह स्तोत्र सुखकार।
पूर्ण किया जिन भक्ति वश, कटो भव्य रुचि धार।।6।।

जब तक नहिं हो 'ज्ञानमती', केवल एक महान्।
तब तक जग में स्थायि हो, स्तूप स्तोत्र महान्।।7।।

हस्तिनागपुर तीर्थ पर, जब तक तेरहद्वीप।
तब तक स्तूप स्तोत्र यह, बने सिद्धिपथ दीप।।8।।

।।इति समवसरणस्तूपस्तोत्रं संपूर्णम् ।।
।।जैनं जयतु शासनम्।।

तीर्थंकर धर्मचक्र स्तोत्र

मंगलाचरण

ऊँ नमो मंगलं कुर्यात्, ह्रीं नमश्चापिमंगलं।
मोक्षबीजं महामंत्रं, अर्हं नमःसुमंगलम्।।1।।

तीर्थकृत्सन्निधौ धर्म–चक्राणि विभान्त्यपि।
ते तानि चापि चक्राणि, कुर्वन्तु मम मंगलम्।।2।।

–गीता छंद –

तीर्थेश प्रभु के समवसृति में, प्रथम कटनी पर दिखें।
ये धर्मचक्र चहुँ दिशी, हजार आरों से दिपें।।
ये चक्र सर्वप्रकाश से, मिथ्यात्व तम को नाशते।
अज्ञान को भी दूर करके, ज्ञान ज्योति प्रकाशते।।3।।

–नरेन्द्र छंद–

अष्टम भूमि के बाद प्रथम कटनी वैडूर्य मणी की है।
बारह कोठे अरु चार गली, से सोलह बनी सीढ़ियां हैं।।
चूड़ी सम गोल इसी ऊपर, चारों दिश में यक्षेंद्र खड़े।
वे शिर पर धर्मचक्र धारें, उन वंदत सुख सौभाग्य बढ़े।।4।।

–नाराच छंद –

समोसरण जिनेश आदिनाथ का विशाल है।
सुपीठ उपरि धर्मचक्र सहस रश्मि जाल है।।
जिनेन्द्र के विहार में सुअग्र अग्र ये चलें।
सहस्रआर धर्मचक्र मैं नमूं सदा भले।।1।।

जिनेंद्र आदिनाथ पीठ दाहिनी दिशी दिपे।
सुधर्मचक्र भव्य के हजार पाप को खिपे।।जिनेंद्र.।।2।।

समोसरण जिनेश के सुपीठ पे अपर दिशा।
सुधर्मचक्र भक्त के हजार दोष टालता।।
जिनेन्द्र के विहार में सुअग्र अग्र ये चलें।
सहस्रआर धर्मचक्र मैं नमूं सदा भले।।3।।

जिनेंद्र आदिनाथ के हि उत्तरी कटनीय पे।
सुयश शीश पे विराजमान चक्र बहु दिपे।।जिनेंद्र.।।4।।

अजित जिनेंद्र का समोसरण अजेय विश्व में।
हजार रश्मि से चमक रहा अपूर्व पूर्व में।।जिनेंद्र.।।5।।

जिनेश के समोसरणविषे सुदूर से दिखे।
हजार खंड मोह के करे अपूर्व तेज से।।जिनेंद्र.।।6।।

अपूर्व तेज से सुभक्त चित्त अंधकार को।
क्षणेक में भगावता सहस्रआर चक्र जो।।जिनेंद्र.।।7।।

महान दीप्तिमान चक्र रात्रि भी न हो वहां।
अनेक कोटि सूर्य तेज देख लाजते[1] वहां।।जिनेंद्र.।।8।।

जिनेश सम्भवेश का समोसरण चकासता[2]।
वहीं पे पूर्व में हि धर्मचक्र खूब भासता[3]।।जिनेंद्र.।।9।।

मुनीश शीश नावते अपूर्व भक्तिभाव से।
गणीशकीर्ति धर्मचक्र की सदैव गावते।।जिनेंद्र.।।10।।

सुरेश पूजते सदैव अष्टद्रव्य लाय के।
नरेश वंदते सदैव धर्मचक्र भाव से।।जिनेंद्र.।।11।।

अनंत जन्म के अनंत कर्म नष्ट होयंगे।
सुचक्र वंदते अनंत ज्ञान सौख्य होयंगे।।जिनेंद्र.।।12।।

जिनेश अभिनंदनेश का समोसरण दिपे।
वहां सुपूर्वदिक्क में सुचक्र तेज से दिपे।।जिनेंद्र.।।13।।

असंख्य देव देवियां सुचक्र पूजते वहां।
सुअप्सरायें बांसुरी बजाय गावती वहां।।जिनेंद्र.।।14।।

1. फीके पड़ जाते हैं। 2. चमक रहा है। 3. चमकता है।

निजात्म तत्व प्राप्ति हेतु साधु वंदना करें।
सुचक्र के समीप आर्यिकायें स्तोत्र उच्चरें।।जिनेंद्र.।।15।।

शशीकिरण हजार से अधीक रश्मियां धरे।
सुचक्र सौम्यकांति से दिशा प्रसन्न भी करे।।जिनेंद्र.।।16।।

–दोहा –

सुमतिनाथ जिनराज का, समवसरण अभिराम।
धर्मचक्र पूरब दिशी, झुक झुक करूँ प्रणाम।।17।।

समवसरणदक्षिणदिशी, धर्मचक्र चमकंत।
इक हजार आरों सहित, वंदन से अघ अंत।।18।।

प्रथम पीठ पर अपर दिश, धर्मचक्र भास्वान्।
सूर्यचंद्र फीका करे, वंदत स्वात्म निधान।।19।।

धर्मचक्र उत्तरदिशी, आरे एक हजार।
चमचम करते शोभते, नमत मिले भवपार।।20।।

पद्मप्रभू जिनराज का, समवसरण विलसंत।
वंदूँ श्रद्धा भक्ति से, मिले सुज्ञान अनंत।।21।।

समवसरण में पीठ पर, धर्मचक्र अभिनंद्य।
भक्तिभाव से मैं नमूँ, सुर नर मुनिगण वंद्य।।22।।

प्रथम पीठ वैडूर्यमणि, निर्मित शोभावान्।
धर्मचक्र को नित नमूँ, रोग शोक दुख हान।।23।।

पद्मा लक्ष्मी तुम चरण, सेवे भक्ति भरंत।
धर्मचक्र की वंदना, करते सौख्य भरंत।।24।।

श्रीसुपार्श्व जिनदेव का, समवसरण सुर मान्य।
धर्मचक्र पूरब दिशी, नमत बनूँ जग मान्य।।25।।

रत्नत्रय निधि के धनी, वीतराग जिनदेव।
धर्मचक्र वंदूं मुझे, एक रत्न ही देव।।26।।

दशधर्मों के हेतु मैं, करूँ आपकी सेव।
धर्मचक्र वंदूं सदा, पूरो वांछा देव।।27।।

क्रोध मान मायादि मुझ, दोष हरो जिनदेव।
परम शांति हित मैं करूँ, धर्मचक्र की सेव।।28।।

चंद्रनाथ भगवान का, समवसरण अतिशायि।
धर्मचक्र वंदूं सदा, जिनवर वृष सुखदायि।।29।।

चंद्र कांति सम आपके, गुणमणि धवल अनंत।
हजार आरों से दिपे, नमत चक्र भव अंत।।30।।

सर्व व्याधि पीड़ा नशे, धर्मचक्र वंदत।
अंत समाधी हो भली, यही आश भगवंत।।31।।

आत्मसुखामृत पीवते, ऋद्धिधारि मुनिसंत।
धर्मचक्र को सेवते, निजगुणरत्न भरंत।।32।।

–चामर छंद –

पुष्पदंत नाथ का समोसरण अपूर्व है।
हजार आर से दिपंत धर्मचक्र पूर्व है।।
रोग शोक भी टलें हजार पाप शांत हों।
धर्मचक्र वंदते निजात्म सौख्य लाभ हो।।33।।

क्रोध मान छद्म लोभ राग द्वेष मोह ये।
आतमा को कष्ट दें इन्हें निकाल दीजिए।।रोग.।।34।।

आप पाद पद्म सेय मैं निहाल हो गया।
तीन रत्न पाय के हि भाग्यशाली हो गया।।रोग.।।35।।

गंध वर्ण रस स्पर्श शून्य आतमा अमूर्त।
आप पाद वंदते हि प्राप्त होय निज स्वरूप।।रोग.।।36।।

शीतलेश का समोसरण शतेंद्र पूज्य है।
वाक्य भी अतीव शीत सर्व दोष दूर हैं।।रोग.।।37।।

अंतरातमा नमें जिनेंद्र पाद भक्ति से।
सर्व दोष टाल के हि सिद्ध आतमा बनें।।रोग.।।38।।

सार्वभौम चक्रवर्ति संपदा लहें वही।
भक्ति से जिनेंद्र पाद वंदते सदा यहीं।।रोग.।।39।।

जन्म मृत्यु नाश के अपूर्व धाम दीजिये।
नाथ आप पास में मुझे स्थान दीजिये।।रोग.।।40।।

श्री श्रेयांसनाथ समोसर्ण में अधर रहें।
भव्य जीव के अनंत पाप को तुरत दहें।।रोग.।।41।।

साधुवृन्द आप पाद वंदते सुयश लहें।
आत्मरस पियूष का प्रवाह चित्त में बहे।।रोग.।।42।।

चार ज्ञान धारि भी गणेश आप वंदते।
भव्य जीव वंद वंद सर्व दोष खंडते।।रोग.।।43।।

जो गृहस्थ नित्य अर्चना करें व दान दें।
वे तुरंत खार भव समुद्र पार पा सकें।।रोग.।।44।।

वासुपूज्य कीर्ति को सरस्वती सदा कहे।
आप पाद वंद भव्य सर्व आपदा दहें।।रोग.।।45।।

अष्ट द्रव्य आदि से सुलेश पाप हो सही।
विंदु मात्र विष समुद्र नीर दूषता नहीं।।रोग.।।46।।

जो गृहस्थ आप बिंब औ निलय बनावते।
दोय तीन ही भवों में सिद्धि सौख्य पावते।।रोग.।।47।।

सप्त भंग की तरंग से ध्वनी तरंगिणी।
भव्य पाप पंक धोय के करे पवित्रनी।।रोग.।।48।।

–वसंततिलका छंद –

तीर्थेश श्रीविमल के सुसमोसरण में।
यक्षेश शीश पर धर्म सु चक्र धारें।।

श्रीधर्मचक्र नमते मन ध्वांत[1] भागे।
सज्ज्ञानसूर्य चमके शिव सौख्य जागे।।49।।

आरे हजार चमकें जिनधर्म फैले।
मोहारि शीश झट काट स्वराज्य ले लें।।श्री.।।50।।

सम्यक्त्व रत्न अनमोल त्रिलोक में है।
जो आप भक्त उनको क्षण में मिले हैं।।श्री.।।51।।

धर्मोपदेश प्रभु का अद्भुत जगत् में।
जो पा लिये भुवन में धन धन्य वो हैं।।श्री.।।52।।

स्वामी अनंत यम अंतक नान्त्य गुणभृत्।
सौधर्म इन्द्र तुम किन्नर है शिरोनत।।श्री.।।53।।

श्रीचक्र का सहज तेज अपूर्व ऐसा।
कोटी रवी शशि व अगनी में न वैसा।।श्री.।।54।।

हैं आप में विमल दर्शन ज्ञान शक्ती।
निर्बाध सौख्य गुणमणिनिधियाँ अनंती।।श्री.।।55।।

जो आपके चरण में नमते सदा ही।
वे गुण अनंत निज के धरते सदा ही।।श्री.।।56।।

श्री धर्मनाथ निज आसन से अधर हैं।
मृत्युंजयी पद सरोज नमें मुनी हैं।।श्री.।।57।।

जो जन्म मृत्यु भव दुःख विनाश चाहें।
वे धर्मतीर्थ जल में नित ही नहावें।।श्री.।।58।।

पंचेंद्रियां मन छहों वश में करें जो।
छै द्रव्य को श्रद्धहें सुख से तिरें वो।।श्री.।।59।।

जो साधु नित्य रमते जिनपाद में ही।
वे पावते निज सुधारस धाम जल्दी।।श्री.।।60।।

1. अंधेरा।

श्री शांतिनाथ जिनके सु समोसरण में।
भक्ती धरें परम शांत बने क्षणों में।।श्री.।।61।।

जो आपके चरण पंकज में नमें हैं।
वे सर्व वैर कलहादि स्वयं वमें हैं।।श्री.।।62।।

हो पूर्ण शांति मन में इस हेतु वंदूं।
संपूर्ण ज्ञान सुख से निज आत्म मंडूं।।श्री.।।63।।

श्री शांतिनाथ तिहुं लोक सुशांति दाता।
तुम नाम मंत्र जपते मिटती असाता।।श्री.।।64।।

–सखी छंद–

श्री कुंथुनाथ जग त्राता, तुम समवसरण सुखदाता।
वैडूर्यमणी कटनी पे, नमुँ धर्मचक्र अतिदीपे।।65।।

पहली कटनी मन मोहे, अठ मंगल द्रव्य सु सोहें।
जिन धर्मचक्र अति चमके, सब पुण्य फले अतिदमके।।66।।

इस धर्मचक्र कटनी पे, पूजन सामग्री शोभे।
जिन धर्मचक्र मैं वंदूं, भवभव के दुख को खंडूं।।67।।

धन धान्य स्वजन की वृद्धी, जिन वंदत सर्व समृद्धी।
जिन धर्मचक्र मैं वंदूं, भवभव के दुख को खंडूं।।68।।

जो भक्तिभाव ले करके, जिन वंदें मन वच तन से।
वो पावें सुख अतिशायी, जिनधर्मचक्र सुखदायी।।69।।

श्री अरहनाथ भगवंता, उन समवसरण विलसंता।
जिन धर्मचक्र मैं वंदूं, भवभव के दुख को खंडूं।।70।।

मोहारिजयी अरनाथा, मुनि नित्य नमाते माथा।
जिन धर्मचक्र मैं वंदूं, भवभव के दुख को खंडूं।।71।।

सब विघ्न अरी झट भागे, वंदन से सब सुख सागे।
जिन धर्मचक्र मैं वंदूं, भवभव के दुख को खंडूं।।72।।

श्रीमल्लिनाथ भवविजयी, इन समवसरण सुखभरई।
जिन धर्मचक्र मैं वंदूं, भवभव के दुख को खंडूं।।73।।

चिन्मय चिंतामणि देवा, चिंतित फलती प्रभुसेवा।
जिन धर्मचक्र मैं वंदूं, भवभव के दुख को खंडूं।।74।।

जिन कल्पतरू फलदाता, बिन मांगे सब सुखदाता।
जिन धर्मचक्र मैं वंदूं, भवभव के दुख को खंडूं।।75।।

सब इष्ट फलें पूजा से, सब विघ्न भगें पूजा से।
जिन धर्मचक्र मैं वंदूं, भवभव के दुख को खंडूं।।76।।

मुनिसुव्रत जिनवर भक्ती, इससे प्रगटे निज शक्ती।
जिन धर्मचक्र मैं वंदूं, भवभव के दुख को खंडूं।।77।।

रत्नत्रय अनघ निधी है, जिनपूजा से मिलती है।
जिन धर्मचक्र मैं वंदूं, भवभव के दुख को खंडूं।।78।।

जो तपश्चरण नित करते, वे भी निज भक्ती धरते।
जिन धर्मचक्र मैं वंदूं, भवभव के दुख को खंडूं।।79।।

जिनभक्ती समकित निधि है, इस बिन सिद्धी नहिं हो है।
जिन धर्मचक्र मैं वंदूँ, भवभव के दुख से छूटूँ।।80।।

–अडिल्ल छंद –

समवसरण में नमि जिनराज विराजते।
प्रथम पीठ पर धर्म, चक्र शुभ राजते।।
सप्त परम स्थान, हेतु भक्ती करूँ।
धर्मचक्र को नमूं, मुक्ति लक्ष्मी वरूँ।।81।।

अशुभ कर्म के बंध, उदय सत्ता टले।
ऋद्धि सिद्धि भरपूर, होय अतिशय भले।।सप्त.।।82।।

सौम्य छवी नासाग्र दृष्टि मन को हरे।
सम्यग्दृष्टि भाव भक्ति से सुख भरें।।सप्त.।।83।।

अशुभ योग से बचूँ प्रवृत्ती शुभ करूँ।
देश चरित को धार कर्म हल्के करूँ।।सप्त.।।84।।

नेमिनाथ जिन समवसरण में राजते।
पूजत ही निजज्ञान ज्योति हृदि भासते।।सप्त.।।85।।

रत्न जटित सिंहासन, छवि जन मन हरे।
अधर राजते जिनवर, त्रिभुवन सुख करें।।सप्त.।।86।।

तीन छत्र शिर ऊपर, शोभें कांति से।
त्रिभुवन प्रभुत्ता कहें, सभी को भाव से।।सप्त.।।87।।

ढोरें चौंसठ चंवर यक्ष भक्ती भरे।
जो जन भक्ती करें सुयश जिन विस्तरें।।सप्त.।।88।।

पार्श्वनाथ जिनराज, सर्व सरताज हैं।
समवसरण में आप, सर्व जन तात हैं।।सप्त.।।89।।

संकट मोचन शोकहरन, भविशर्ण हैं।
आप एक भववारिधि तारण तर्ण हैं।।सप्त.।।90।।
क्षमा मार्दव आर्जव सत्य सुधर्म हैं।
तुम भक्ती से धर्म करें शिव शर्म हैं।।सप्त.।।91।।

शुचि संयम तप त्याग, अकिंचन ब्रह्मव्रत।
जिन भक्ती से पूरण हों, ये धर्म सब।।सप्त.।।92।।

महावीर जिन समवसरण अतिशय भरा।
खाई लता बगीचे से चहुंदिश हरा।।सप्त.।।93।।

अन्धे लंगड़े लूले बहिरे स्वस्थ हों।
बीस हजार सीढ़ियाँ चढ़ जिन भक्त हों।।सप्त.।।94।।

धर्म चक्र के हजार आरे चमकते।
अंधकार जन मन का हरते दमकते।।सप्त.।।95।।

जो परोक्ष में समवसरण को वंदते।
वे निश्चित प्रत्यक्ष दर्श को पावते।।सप्त.।।96।।

–दोहा –

एक एक जिनराज के, चार-चार वृष[1] चक्र।
छ्यानवें को वंदते, ज्ञानमती मम भद्र।।97।।

–गीताछंद–

तीर्थंकरों के समवसृति में, चारदिश में शोभते।
ये धर्मचक्र हजार आरों, से चहूँदिशि चमकते।।
जो धर्मचक्र स्तोत्र यह, भविजन पढ़ेंगे भक्ति से।
वे धर्मचक्र चलाएँगे, नित वंद्य होंगे इंद्र से।।98।।

धर्मचक्र महिमा

–दोहा –

धर्मचक्र जिनदेव का, कहा अनादि अनंत।
समवसरण में राजता, अतः आदि भी अंत।।99।।

–रोला छंद –

जय जय श्रीजिनदेव, जय जय श्री भगवंता।
जय जय तुमपद सेव, करते मुनिगण संता।।
जय जय सुर नर वंद्य, चरण कमल अतिशायी।
मिले निजातम सद्म, साम्य सुधारस पायी।।100।।

जो तुम भक्ति करंत, पुण्य भंडार भरे हैं।
कटते पाप अनंत, गुण भंडार धरे हैं।।
विष निर्विष हो जाय, सर्प बनें सुम[1] माला।
शत्रु मित्र हो जाय, अग्नि बने जल कमला।।101।।

नदी सिंधु तालाब, पार करें इक क्षण में।
स्थल सम बन जाय, नहिं डूबे जन जल में।।

1. धर्मचक्र।

जो जन हों प्रतिकूल, सब अनुकूल बने हैं।
व्यंतर भूत पिशाच, क्षण में दूर भगे हैं।।102।।

कुष्ठ भगंदर आदि, व्याधि नशें भक्ती से।
नहिं टिक सकती आधि, आर्त भगे शक्ती से।।
बंधे असाता कर्म, सातामय परिणमते।
जो वंदे जिन चर्ण, अशुभकरम शुभ बनते।।103।।

इष्ट वियोग न होय, नहिं अनिष्ट संयोगा।
इच्छित पूरे होय, कभी न हो दुख शोका।।
राजादिक सब वश्य, सब जग में यश फैले।
करें सभी सन्मान, शांति स्वस्थता मीले।।104।।

धन धान्यादिक वृद्धि, वंश फले संतति से।
भार्या पुत्र सुतादि, बढ़ें धर्म नीति से।।
श्रावक धर्म बढ़ाय, दान शील उपवासा।
जिन पूजा सुखदाय, करो गृहस्थ निवासा।।105।।

समवसरण में पीठ, नीलमणी का सुंदर।
धर्मचक्र हैं चार, आरे सहस मनोहर।।
इनको वंदें भव्य, अतिशय पुण्य बढ़ावें।
करें करम वन ध्वस्त, शिव रमणी को पावें।।106।।

–दोहा –

नमूँ नमूँ नित भक्ति से, धर्मचक्र तिहुंकाल।
ज्ञानमती सुख संपदा, देकर करो निहाल।।107।।

1. फूलों की।

प्रशस्ति

–दोहा –

चौबीसों तीर्थेश को, नमूं अनंतों बार।
समवसरण में राजते, धर्मचक्र सुखकार।।1।।

हस्तिनापुर क्षेत्र पर, जंबूद्वीप विख्यात।
अतिशय जिनमंदिर यहां, अखिल विश्व में ख्यात।।2।।

चारित्र चक्रवर्ती गुरू, शांतिसागराचार्य।
उनके पट्टाधीश श्री, वीरसागराचार्य।।3।।

उनकी शिष्या आर्यिका ज्ञानमति, जग मान्य।
गणिनी मैंने भक्तिवश, रचा स्तोत्र महान।।4।।

जब तक जग में सौख्यप्रद, जिनशासन गुणखान।
धर्मचक्र स्तोत्र यह, तब तक हो सुखदान।।5।।

(इति श्रीतीर्थंकरधर्मचक्रस्तोत्रं समाप्तं)।।

।।इति मंगलं भूयात्।।

सरस्वती वंदना

मतेः सूतेर्वीजं सृजति मनसश्चक्षुरपरं।
यदाश्रित्यात्मायं भवति निखिलयेज्ञविषयः।।
विवर्तैरत्यंतैर्भरित भुवनाभोगविभवैः।
स्फुरत्तत्वं ज्योतिस्तदिह जयतादक्षरमयम्।।

अर्थ – जिसका अभ्यास करके यह आत्मा एक अद्वितीय चक्षु – ज्ञाननेत्र को प्राप्त कर लेता है जिससे यह संपूर्ण लोक – अलोक को जानने वाला हो जाता है, जिस ज्योति में समस्त जीव, अजीव आदि तत्त्व तीनों लोकों में विस्तार से पाई जाने वाली अपनी अनन्त पर्यायों के साथ प्रकाशित हो रहे हैं तथा जो विशेष बुद्धि की उत्पत्ति का एकमात्र बीज है, वह अक्षरमय ज्योति-द्वादशांगमय श्रुतज्ञान इस पृथ्वीतल पर सदैव जयशील होवे अर्थात् पूर्वोक्त विशेषणों से विशिष्ट जिनमुखोद्भूत सरस्वती माता को मेरा बारम्बार नमस्कार होवे।

समवसरण गंधकुटी स्तोत्र

–गीता छंद–

तीर्थंकरों की सभाभूमी, धनपती रचना करें।
है समवसरण सुनाम उसका, वह अतुलवैभव धरे।।
जो घातिया को घातते, कैवल्यज्ञान विकासते।
वे इस सभा के मध्य अधर, सुगंधकुटि पर राजते।।1।।

–दोहा–

अनंत चतुष्टय के धनी, तीर्थंकर चौबीस।
मन-वच-तन त्रयशुद्धि से, नमूँ-नमूँ नत शीश।।2।।

–गीता छंद–

सब रत्नमय यह पीठ सुंदर, देवनिर्मित तीसरा।
श्री आदिनाथ जिनेश का, यह शोभता अतिशय भरा।।
वर ज्ञान आदिक क्षायिकी, मिल जांय केवल लब्धियां।
जिन गंधकुटि को मैं नमूं, मिल जांय आतम सिद्धियाँ।।1।।

श्री अजित जिनके समवसृति में, सर्व रत्नसु पीठ पे।
जिन गंधकुटि चामर ध्वजाओं, से भरी अतिशय दिपे।।वर.।।2।।

वर पीठ तीजे में चतुर्दिश, आठ आठहिं सीढ़ियाँ।
उस पर सुशोभे गंधकुटि, जहं नाचतीं ध्वजपंक्तियाँ।।वर.।।3।।

जिननाथ जिसमें राजते, यह गंधकुटि सुर वंद्य है।
नित करें स्तुति वंदना, शिर नावते मुनि वृंद हैं।।वर.।।4।।

श्री सुमति जिन अज्ञान हरते, ज्ञान भरते भक्त में।
मुनिमन कमल विकसावते, प्रभु सूर्य अनुपम जगत में।।वर.।।5।।
जिन पद्मप्रभु की गंधकुटि में, सर्वदिश रचना दिखे।
प्रत्येक मंगल द्रव्य इक सौ आठ चारों दिश रखें।।।वर.।।6।।

वर धूप घट मणिरत्न दीपक, मोतियों के हार हैं।
मणि पीठ तीजा सोहता, जो पुण्य का भंडार है।।वर.।।7।।

चंदाप्रभू के समवसृति में, सर्वजन प्रीती भरें।
जिनपाद पंकज सेवते, मन में अतुल भक्ती धरें।।
वर ज्ञान आदिक क्षायिकी, मिल जांय केवल लब्धियां।
जिन गंधकुटि को मैं नमूं, मिल जांय आतम सिद्धियाँ।।8।।

स्वर्णिम रजतमाला कुसुम-माला सुरभि फैलावतीं।
जिन नाथ का हि प्रभाव सोने में सुगंधी आवती।।वर.।।9।।

शीतल जिनेश्वर वचन सारे, विश्व को शीतल करें।
जो उन वचन पीयूष पीते, वे अमर पद को धरें।।वर.।।10।।

श्रेयांस जिन जग में सभी को, क्षेम मंगल कर रहें।
जो नाथ के प्रतिकूल हैं, वो दुर्गती में पड़ रहे।।वर.।।11।।
जो आप का संस्तव करें, वे सर्व सुख संपति लहें।
निंदा करें वे दुख लहें, प्रभु वीतरागी ही रहें।।वर.।।12।।

श्री विमल जिनके पाद पंकज, मन पवित्र बनावते।
जो आप शरणे आ गये, वो रिद्धि सिद्धी पावते।।वर.।।13।।

बहिरात्मता को छोड़कर, मैं अंतरात्मा हो गया।
परमात्मपद कैसे मिले, यह भान मुझको हो गया।।वर.।।14।।

श्री धर्मनाथ जिनेन्द्र दशविध, धर्म के दातार हैं।
जो पूजते उनके चरण वे, शीघ्र भवदधिपार हैं।।वर.।।15।।

श्रीशांतिनाथ जिनेश शाश्वत, शांति के दाता तुम्हीं।
प्रभु शांति ऐसी दीजिये, फिर हो कभी वांछा नहीं।।वर.।।16।।

श्री कुंथु जिनके समवसृति में, भव्य सम्यग्दृष्टि हैं।
जो उन चरण को पूजते, उनको मिले भवमुक्ति है।।वर.।।17।।

अरनाथ मोहारी विजेता, घातिया को घात के।
निज धाम को पाकर बने, भगवान जग आधार वे।।वर.।।18।।

श्री मल्लि जिनवर द्रव्य मल, अरु भाव मल को धोयंगे।
जो भव्य उन पूजा करें, वो पूर्ण पावन होयंगे।।।वर.।।19।।

भगवान मुनिसुव्रत निजातम, शांति रस में लीन हैं।
उनकी करें जो वंदना, वे धन्य हैं स्वाधीन हैं।।वर.।।20।।

यह आत्मा रस गंध वर्ण, स्पर्श गुण से शून्य है।
जो ध्यावते झट पावते, निज के अखिल गुणपूर्ण वे।।वर.।।21।।

श्री नेमिनाथ जगत् पिता, श्रीकृष्ण के लघु भ्रात भी।
जग सूर्य करुणा सिंधुवर्धन, हेतु अनुपम चंद भी।।वर.।।22।।

प्रभु पार्श्वनाथ त्रिलोक शेखर, शिखामणि विख्यात हैं।
पद्मावती धरणेन्द्र भी, नित प्रति नमाते माथ हैं।।वर.।।23।।

महावीर प्रभु का आज भी, शासन जगत में छा रहा।
जो हैं अहिंसा प्रिय उन्हों के, चित्त को अति भा रहा।।वर.।।24।।

चौबीस जिनके समवसृति, में रत्ननिर्मित पीठ पे।
शुभगंधकुटि अतिशायि मंगल-द्रव्य माला से दिपे।।वर.।।25।।

(गंधकुटी महिमा)

-दोहा-

विविध सुगंधी से भरी, गंधकुटी अभिराम।
मन वच तन से नित्य ही, शत शत करूँ प्रणाम।।26।।

-शंभु छंद-

जय जय श्रीजिनवर गंधकुटी, चहुंदिश रत्नों की मालायें।
जय जय श्रीजिनवर गंधकुटी, चहुंदिश फूलों की मालायें।।
जय गंधकुटी के शिखरों पर, फहरायें कोटि पताकायें।
चहुं ओर लटकते मोती के, झालर अरु वंदन मालायें।।27।।

स्वर्गों पर है सर्वार्थसिद्धि, मेरु पर दिपे चूलिका है।
वैसे ही समवसरण मस्तक पर, गंधकुटी सु कर्णिका है।।
मंगल द्रव्यों से मंगलमय, बहूधूप घटों से सुरभित है।
चहुं ओर जड़े बहु रत्नों की, कांती से चित्र विचित्रित है।28।।

इस गंधकुटी की शोभा को, सुरगुरु भी नहिं कह सकते हैं।
इस गधंकुटी की महिमा को, गणधर गाते नहिं थकते हैं।।
माँ सरस्वती कल्पांत काल तक, महिमा नहिं लिख सकती है।
फिर मुझमें बुद्धी अती तुच्छ, लव कहने की नहिं शक्ति है।।29।।

सिंहासन स्वर्णमयी सुंदर, बहुविध रत्नों से जड़ा हुआ।
निज छवि से इंद्रधनुष शोभा, वह चारों दिश में करा रहा।।
इस सिंहासन पर तीर्थंकर, चतुरंगुल अधर विराज रहे।
ऐश्वर्य तीन जग अतिशायी, पाकर भी उससे पृथक् रहें।।30।।

नभ से सुरगण नाना विध के, पुष्पों की वर्षा करते हैं।
वे पुष्प सुगंधित जहां तहां, डंठल नीचे कर पड़ते हैं।।
वे खिले पुष्प मानों कहते, जो प्रभु के पग में पड़ते हैं।
उनके कर्मों के बंधन सब नीचे, होकर गिर पड़ते हैं।।31।।

प्रभु के समीप तरुवर अशोक, वह पवन झकोरे से हिलता।
मरकतमणि के पत्ते चिकने, मूंगे के पुष्पों से खिलता।।
प्रभु शिर पर तीन छत्र उज्ज्वल, मोती की लरें लटकती हैं।
त्रिभुवन के ईश्वर हैं जिनवर, ऐसा कह खूब चमकती हैं।।32।।

दोनों बाजू यक्षेंन्द्र खड़े, चौंसठ चंवरों को ढोरे हैं।
पय सागर लहरों सदृश दिखें, या झरने सम अति शोभें हैं।।
ढुरते ये चवंर उपरि जाते, मानो भव्यों से कहते हैं।
जो चवंर ढुराते जिनवर के, वे ऊर्ध्वगती ही लहते हैं।।33।।

सुरगण मिल जिनको बजा रहें, ऐसी दुंदुभि वहं बजती हैं।
जो शंख नगाड़े पणव आदि की, ऊँची ध्वनि मन हरती है।।
प्रभु की तनु छवि से बना हुआ, भामंडल अद्भुत तेज धरें।
भविजन उसमें निज सातसात, भव देखें अतिशय मोद भरें। 34।।

दिव्यध्वनि मेघ गर्जनासम, जिनमुख पंकज से खिरती है।
भव्यों के कानों में जाकर, सब भाषामय परिणमती है।।

ये आठ कहें हैं प्रातिहार्य, जिनको सुरगण मिल करते हैं।
इन वैभव के स्वामी जिनवर, वंदत अनंत दुख हरते हैं।।35।।

जिन गंधकुटी त्रिभुवन वंदित, मुनिगण भी शिर से नमते हैं।
जो वंदे ध्यावें भक्ति करें, वे भव वारिधि से तरते हैं।।
जिनवर सन्निध पा गंधकुटी, सब जन से वंदन पाती है।
जो नाममात्र इसका लेते, उन्हें समकित रत्न दिलाती है।।36।।

–दोहा–

त्रिभुवन की सब सुरभियुत, गंधकुटी जगश्रेष्ठ।
'ज्ञानमती' शिरनत नमूं, बनूं जगत में ज्येष्ठ।।37।।

प्रशस्ति

–शंभु छंद–

त्रिभुवन में धर्म वही उत्तम, जो श्रेष्ठ सुखों में धरता है।
सांसारिक सभी सौख्य देकर, मुक्ती पद तक पहुँचता है।।
इस रत्नत्रयमय धर्मतीर्थ के, कर्ता तीर्थंकर बनते।
इनको प्रणमूँ मैं बार बार, ये सर्व आधि व्याधी हरते।।1।।

श्री महावीर के शासन में, श्री कुंदकुंद आम्नाय प्रथित।
सरस्वतीगच्द गण बलात्कार से, जैन दिगम्बर धर्म विशद।।
इस परम्परा में सदी बीसवीं , के आचार्य प्रथम गुरुवर।
चारित्र चक्रवर्ती श्री शान्तीसागर सबके गुरु प्रवर।।2।।

इन प्रथमशिष्य पट्टाधिप श्री, गुरु वीरसागराचार्य हुए।
मुझको ये आर्यिका ज्ञानमती, करके अन्वर्थ नाम दिये।।
इन रत्नत्रय दाता गुरु, को, है मेरा वंदन बार बार।
माँ सरस्वती को नित्य नमूँ, जिनका मुझ पर है बहूपकार।।3।।

इस गंधकुटी की भक्ती से, स्तोत्र बनाया है मैंने।
प्रभु भक्ती से प्रभु गंधकुटी, दर्शन की आशा है मन में।।

इस दुषमकाल के अन्त समय तक, जैनधर्म जयवंत रहे।
इस हस्तिनागपुर में तब तक, यह जंबूद्वीप स्थायि रहे।।4।।

–दोहा–

जब तक जग में सौख्य प्रद, जिनशासन गुणवंत।
गंधकुटी स्तोत्र यह, तब तक दे शिवपंथ।।5।।

(इति श्रीसमवसरणगंधकुटीस्तोत्रं समाप्तं)
।।इति मंगलं भूयात्।।

जिनप्रतिमा विराजमान करने का फल

कुत्थुंभरिदलमेत्ते जिणभवणे जो ठवेइ जिणपडिमं।
सरिसवमेत्तं पि लहेइ सो णरो तित्थयरपुण्णं।।481।।
जो पुण जिणिंदभवणं समुण्णयं परिहि-तोरणसमग्गं।
णिम्मावइ तस्स फलं को सक्कइ वण्णिउं सयलं।।482।।

–आचार्य वसुनन्दि

कुंस्तुवरखण्डमात्रं यो निर्माप्य जिनालयम्।
स्थापयेत्प्रतिमां स स्यात् त्रैलोक्यस्तुतिगोचरः।।245।।
यस्तु निर्मापयेत्तुङ्गं जिनं चैत्यं मनोहरम्।
वक्तुं तस्य फलं शक्तः कथं सर्वविदोऽखिलम्।।246।।

–आचार्य गुणभद्र

अर्थ–जो मनुष्य कुंथुम्भरी (धनिया) के दलमात्र अर्थात् पत्र बराबर जिनभवन बनवाकर उसमें सरसों के बराबर भी जिनप्रतिमा को स्थापन करता है, वह तीर्थंकर पद पाने के योग्य पुण्य को प्राप्त करता है, तब जो कोई अति उन्नत और परिधि, तोरण आदि से संयुक्त जिनेन्द्र भवन बनवाता है, उसका समस्त फल वर्णन करने के लिए कौन समर्थ हो सकता है।

समवसरण विंशतिका

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी

–दोहा –

सरस्वती लक्ष्मी जहाँ, नितप्रति करें प्रणाम।
पुण्यमयी उस धाम का, समवसरण है नाम।।

समवसरण का स्वरूप

छंद-विष्णुपद (कहाँ गये चक्री-बारहभावना)

जहाँ पहुँचते ही दर्शक का पाप शमन होता।
जहाँ पहुँचते ही मानी का मान गलन होता।।
सबको शरण प्रदाता वह ही समवसरण माना।
जिनवर की उस धर्मसभा को नमूँ परमधामा।।1।।

समवसरण के स्वामी

तीर्थंकर प्रभु तप करके बनते केवलज्ञानी।
वे ही बन अरिहंत कहाते समवसरण स्वामी।।
इन्द्राज्ञा से धनकुबेर रचता इक धर्मसभा।
नमूँ उसे नश जाती जिससे भव की पूर्ण व्यथा।।2।।

मानस्तंभ का महत्व

समवसरण की चार दिशा में मानस्तंभ बने।
जिनवर से बारह गुणिते ऊँचे अप्रतिम घने।।
मुख्यद्वार में जाते ही उनका दर्शन होता।
नमूँ वही मानस्तंभ जहाँ मिथ्यात्व वमन होता।।3।।

चैत्यप्रासाद भूमि

प्रथम कोट जो धूलिसाल उससे आगे भूमी।
चैत्यभवन एवं महलों से सहित प्रथम भूमी।।
देव मनुज क्रीड़ा करते वहाँ जाते पुण्यात्मा।
जिनप्रतिमा युत चैत्य भूमि को नमें महानात्मा।।4।।

खातिका भूमि

वेदी के पश्चात् खातिका भू में पुष्प खिले।
जो नव पुष्प कहीं नहिं मिलते वे भी वहाँ मिलें।।
जल से भरी खातिका में भव्यों के भव दिखते।
पावन समवसरण की भू को नमूँ सदा शुचि से।।5।।

लताभूमि

पुनः वेदिका के नन्तर है लताभूमि सुन्दर।
जाते जहाँ मनोरंजन करने को इन्द्र प्रवर।।
कहीं न दिखने वाली दिव्य लताएँ मन हरतीं।
नमूँ तृतिय भूमी को जो संताप सभी हरती।।6।।

उपवन भूमि

दूजे परकोटे के नन्तर उपवन भूमी है।
सप्तच्छद चंपक अशोक वन आम्र की पंक्ती हैं।।
चैत्यवृक्ष चारों दिश में एकेक कहे जाते।
नमूँ जिनेन्द्रों की प्रतिमा मन उपवन खिल जाते।।7।।

ध्वजा भूमि

वेदी के पश्चात् पाँचवी ध्वजाभूमि आती।
दशचिन्हों से युक्त ध्वजा केशरिया लहराती।।
परम अहिंसा का ध्वज लेकर जग में लहराओ।
भक्तिसहित प्रभु समवसरण को बंधु! शीश नावो।।8।।

कल्पभूमि

परकोटा तृतीय के नन्तर कल्पवृक्ष भूमी।
दशविध कल्पवृक्ष से जनता मांग करे पूरी।।
वहाँ बने सिद्धार्थ वृक्ष में सिद्धों की प्रतिमा।
उन सिद्धों को नमते ही निज कार्य सिद्धि करना।।9।।

भवनभूमि

पुनः वेदिका के नन्तर इक भवनभूमि आती।
नव नव स्तूपों से युत महिमा गाई जाती।।

अर्हत् सिद्धों की प्रतिमाएँ उनमें राज रहीं।
उसी भवनभूमी को वंदूँ जो है पुण्यमही।।10।।

श्रीमण्डपभूमि

चौथा स्फटिकमयी परकोटा श्रीमण्डपभूमी।
समवसरण में सबसे अंतिम है अष्टमभूमी।।
वहाँ बने द्वादश कोठों में भव्यजीव बैठें।
नमन करूँ इस भू को जिसके सम्मुख जिन तिष्ठें।।11।।

बारह सभा वर्णन

गणधर मुनि साक्षात् प्रभू के वचन ग्रहण करते।
प्रथम सभा में इसीलिए स्थान ग्रहण करते।।
पुनः आर्यिका देव-देवियाँ मनुज पशू रहते।
जिनवर की दिव्यध्वनि सुनकर जन्म सफल करते।।12।।

गंधकुटी की महिमा

समवसरण के मध्य गंधकुटी में हैं तीर्थंकर।
मुख है एक तथापी दिखते सभी ओर जिनवर।।
इसीलिए तो चतुर्मुखी ब्रह्मा माने जाते।
नमूँ प्रभू की गंधकुटी जहाँ दिव्य सुरभि व्यापे।।13।।

तीर्थंकर महिमा

धर्मतीर्थ जो करें प्रवर्तित तीर्थंकर होते।
चार घातिया कर्म नाश कर वे जिनवर होते।।
उनके कल्याणक में रत्नों की वृष्टी होती।
उन्हें नमूँ तो निश्चित ही मेरी मुक्ती होगी।।14।।

ॐकाररूप दिव्यध्वनि

तीर्थंकर की दिव्यध्वनि ॐकारमयी खिरती।
सात शतक अट्ठारह भाषामय हो परिणमती।।
समवसरण में देव मनुज पशु सभी समझ जाते।
नमूँ दिव्यध्वनि को जिसको केवलज्ञानी पाते।।15।।

गणधर की महिमा

श्रीजिनेन्द्र की वाणी गणधर ही झेला करते।
चारज्ञान से द्वादशांग की रचना वे करते।।
भव्यों के प्रश्नों का उत्तर उनसे ही मिलता।
चौदह सौ बावन गणधर को नमूँ हृदय खिलता।।16।।

प्रमुख श्रोता का पुण्य

दिव्यध्वनि को सुनने वाले एक प्रमुख श्रोता।
होते हैं प्रत्येक समवसरण में इक श्रोता।।
प्रथम भरत अंतिम श्रेणिक ने प्रश्न किये बहुते।
मैं भी बनूँ प्रमुख श्रोता वन्दन कर प्रभु पद में।।17।।

समवसरण का प्रभाव

जहाँ-जहाँ तीर्थंकर का शुभ समवसरण बनता।
वहाँ-वहाँ दुर्भिक्ष आदि सारा संकट टलता।।
शेर गाय भी वैर छोड़ मैत्री धारण करते।
समवसरण के इस प्रभाव को नमूँ भक्ति करके।।18।।

तीर्थंकर के श्रीविहार में स्वर्णकमल रचना

केवलज्ञानी तीर्थंकर जब श्रीविहार करते।
समवसरण विघटित हो जाता गमन गमन करते।।
देवप्रभू के चरणकमल तल स्वर्ण कमल रचते।
सोने में सुगंधि को वे चरितार्थ तभी करते।।19।।

समवसरण दर्शन का महत्व

इस कलियुग में समवसरण साक्षात् नहीं बनते।
चूँकि यहाँ पर तीर्थंकर अब जन्म नहीं धरते।।
फिर भी ये जिनमंदिर भी हैं समवसरण माने।
कालचतुर्थ सदृश इनके दर्शन से भव हानें।।20।।

समवसरण श्रीविहार की महिमा

ऐसा ही इक समवसरण इस धरती पर आया।
ऋषभदेव के उपदेशों को उसने फैलाया।।

गणिनी माता ज्ञानमती की सूझबूझ जानो।
कलियुग में भी सतयुग का दर्शन पाया मानो।।21।।

उपसंहार

हे प्रभु! वर दो मुझको सच्चा समवसरण पाऊँ।
समवसरण के स्वामी तीर्थंकर का पद पाऊँ।।
जब तक वह पद मिले नहीं सम्यक्त्व नहीं छूटे।
उसके बाद ''चंदनामति'' चाहे सब कुछ छूटे।।1।।

–दोहा –

वीर संवत् पच्चीस सौ, चौबिस की कृति जान।
दुतिया कृष्ण आषाढ़ में, किया प्रभू गणगान।।1।।

समवसरण की भक्ति यह, पूर्ण करे सब आश।
यही चन्दनामति हृदय, में है शुभ अभिलाष।।2।।